गृह-जीवन और वैराग्य

जन्म भूमि : मालव-प्रदेश

भारतीय इतिहास में मालवा का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस प्रदेश की उज्जयिनी तथा धारा नगरी का नाम भारत के राजनैतिक व सांस्कृतिक जीवन में अविस्मरणीय है। सम्राट विक्रमादित्य, राजा भोज, महाराजा उदयन, कवि–कुल–गुरु कालिदास आदि का नाम इस प्रदेश से जुड़ा हुआ है। भारत के आधुनिक राजनैतिक मानचित्र में मालवा की यह शस्य श्यामल, वीर–भूमि मध्यप्रदेश राज्यान्तर्गत है। यह मध्यप्रदेश का पश्चिमी भू–भाग है।

कस्बा थांदला

पश्चिमी मध्यप्रदेश में आज का जिला केन्द्र झाबुआ, स्वतंत्रता से पूर्व झाबुआ रियासत का केन्द्र नगर था। झाबुआ जिले में थांदला नामक एक कस्बा है। नाग पर्वत के नाम से विदित विन्ध्यांचल की पश्चिमी पर्वतश्रेणियों ने इस कस्बे को अपनी गोद में समेट रखा है। कस्बे के पास से होकर 'घोड़पुर नदी' बहती है। कस्बे के चारों और अधिकांशतः भीलों की ही बस्तियां है।

माता-पिता

इसी कस्बे थांदला को प्रसिद्ध जैनाचार्य जवाहरलाल जी म.सा. का जन्म स्थान होने का गौरव प्राप्त है और जवाहर लाल जी के पितामह थे सेठ ऋषभदास, जाति ओसवाल जैन, कवाड़ गोत्रीय। उनके दो पुत्रों में छोटे पुत्र श्री जीवराज जी की धर्मपत्नी श्रीमती नाथीबाई की कुक्षि से जवाहरलाल जी ने जन्म लिया। नाथी बाई भी इसी कस्बे के एक अन्य प्रतिष्ठित परिवार से सम्बन्ध थी। वे धोका गौत्रीय सेठ श्रीचन्द जी के कनिष्ठ पुत्र श्री मोतीलाल की पुत्री थी।

जन्म-कालीन परिस्थितियां तथा जन्म

श्रीमद् जवाहराचार्य का जन्म कार्त्तिक शुक्ला चतुर्थी वि. संवत् 1932 तदनुसार सन् 1875 में हुआ। यह वह समय था जब कि देश की स्वतन्त्रता के लिए किया गया भारतीयों का प्रथम प्रयास (1857 का राष्ट्रीय आन्दोलन) यद्यपि असफल हो गया था, तथापि भारतीयों की स्वतंत्र होने की अकांक्षा

और अधिक बलवती हो उठी थी। देश के राजनीतिक जीवन में गर्माहट के साथ ही सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में भी सुधारात्मक परिवर्तनों का दौर आरंभ हो चुका था। दलित, पीड़ित और शोषित वर्ग को उठाने की बात की जाने लगी थी। स्त्रियों को उनके समुचित अधिकार व सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाने की मांग होने लगी थी। हरिजनोद्धार के कार्यक्रम बनाए जाने लगे थे। इन सब परिस्थितियों का जवाहरलाल जी के जीवन और कार्यों पर जो प्रभाव पड़ा, उसका उल्लेख आगे के पृष्ठों में यथा प्रसंग किया गया है।

मातृ-पितृ-वियोग

श्री जवाहरलाल जी अपने माता–पिता की प्रथम सन्तान थे और वे ही उनके एकमात्र पुत्र थे। उनके एक बहिन थी जिसका नाम था जुड़ाव बाई। जब आप दो वर्ष के अबोध शिशु थे तभी आपकी माताजी का हैजे के प्रकोप से देहान्त हो गया। अभी आप पांच वर्ष के ही हो पाये थे कि पिता की छाया भी सिर से उठ गई। पांच वर्ष का यह अबोध बालक मातृ–हीन, पितृ–हीन होकर मामा श्री मूलचन्द जी धोका के आश्रय में रहने लगा। मामा जी थांदला कस्बे में कपड़े की दुकान करते थे।

विद्यालय-प्रवेश

उन दिनों थांदला में ईसाई मिशिनरियों की ओर से एक प्राइमरी स्कूल चलता था। मामा मूलचन्द जी ने बालक जवाहर को इस विद्यालय में विद्याध्ययन के लिए भेजा। परन्तु विद्यालय की पढ़ाई और वातावरण में आपका मन नहीं लगा। फलतः आपने विद्यालय छोड़ दिया। विद्यालय से आपने हिन्दी तथा गुजराती भाषाएं तथा गणित का कुछ प्रारम्भिक ज्ञान ही प्राप्त किया।

बाल्यावस्था की दो उल्लेखनीय घटनाएं

बालक जवाहर के इन दिनों से सम्बन्धित दो घटनाएं उल्लेखनीय हैं। एक घटना जहां उनके शौर्य और साहस का अद्‌भुत उदाहरण प्रस्तुत करती है, वहीं दूसरी घटना प्रारब्ध के चमत्कार को स्वीकारने को बाध्य करती है।

(1) विकट परिस्थितियों में सूझबूझ और साहस

एक बार बालक जवाहर लाल एक बैलगाड़ी से कहीं जा रहे थे।

रास्ता पहाड़ी था फलतः टेढ़ा–मेढ़ा और ऊबड़–खाबड़। कहीं–कहीं रास्ता बहुत तंग भी था। पहाड़ी रास्ते के दूसरी ओर गहरी खाई थी स्थिति ऐसी थी कि बैल जरा भी चूके कि प्राण संकट में। अतः गाड़ी पर सवार सभी यात्री उतर गये और पैदल चलने लगे, परन्तु बालक जवाहर को इस ऊबड़–खाबड़ रास्ते में हिलती–डुलती चलती हुई गाड़ी की सवारी में उल्टा अधिक आनन्द आ रहा था। अतः वे गाड़ीवान के साथ गाड़ी में बैठे रहकर पहाड़ी यात्रा का आनन्द लेने लगे। क्या संकट आ सकता है, मानो इसकी ओर से वे निर्भय और मस्त थे। तभी गाड़ी पहाड़ी ढलान पर आ गई। बैल भागने लगे। गाड़ीवान ने उन्हें वश में करने का बहुतेरा प्रयत्न किया, परन्तु बैलों को न जाने क्या हो गया कि वे काबू से बाहर ही होते गए। गाड़ी की हालत ऐसी हो गई कि अब गिरी, अब उल्टी। भयभीत होकर गाड़ीवान बैलों की रास छोड़कर नीचे कूद गया। अब तो बैल बिल्कुल स्वतंत्र होकर और भी तेज दौड़ने लगे। इस आसन्न संकट में बालक जवाहर ने बड़े साहस और व्युत्पन्नमति से काम लिया। उन्होंने गाड़ीवान का स्थान ग्रहण कर बैलों की रास थाम ली और बैलों को रोकने का प्रयत्न किया। परन्तु प्रकृति को तो मानों उनके साहस और धैर्य की अभी परीक्षा लेनी थी। हुआ यह कि बैलों को रोकने के प्रयत्न में उन्हें एक जोर का धक्का लगा और वे गाड़ी के जुए पर आ गिरे। भाग्य से रस्सी हाथों से छूटी नहीं। वे उसे पकड़े–पकड़े ही जुए से लटक गए। अब हालत यह थी कि जरा भी हाथ छूटा नहीं कि या तो गिरकर गाड़ी से कुचल जाना अथवा किसी खड्डे में गिरकर हड्डी–पसली का चकनाचूर हो जाना। पर बालक जवाहर ने इस संकट में अगाध धैर्य, असीम साहस और गहरी सूझबूझ का परिचय दिया। तनिक भी घबराहट उन्होंने न आने दी। वे स्थिर चित्त बैलों की रास और गाड़ी के जुए को पकड़े रहे। धीरे–धीरे ढलान कम होने लगी और बैल भी प्रकृतिस्थ हो गये। इस प्रकार साहस और स्थिर चित्तता के बल पर उन्होंने अपनी प्राणरक्षा की। वे प्रकृति की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

(2) जाको राखे साइयां

प्रकृति का रहस्य मनुष्य के लिए सदा अबूझा रहा है। कतिपय घटनाएं ऐसी घट जाती हैं कि उनका अनुमान ही नहीं लगाया जा सकता।

ऊपर जिस घटना का उल्लेख किया गया है, वहां मनुष्य के अद्म्य साहस के सामने प्रकृति को ही मानो झुकना पड़ा था। परन्तु एक दूसरी घटना उनके बाल–जीवन से सम्बन्धित और है जो इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि मनुष्य प्रकृति के रहस्य को कभी नहीं पा सकता।

एक बार बालक जवाहर अपने किसी बाल साथ के साथ बातचीत में लीन थे। बातों में कितना समय व्यतीत हो गया, कुछ ध्यान नहीं। पर प्रारब्ध की अद्भूत लीला कि बातचीत करके जैसे ही वे हटे, पास की दीवार गिर पड़ी। वे लोग दीवार के पास खड़े होकर ही बात कर रहे थे। दीवार ऐसे गिरी, जैसे मानों वह इंतजार ही कर रही थी कि कब ये हटें और कब में गिरूँ ? इसलिए यह विश्वास करना ही पड़ता है कि मारने वाले से बचाने वाला बड़ा है। जब तक जीवन लिखा है, कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता और मृत्यु आने पर फिर एक क्षण भी जीने को मिलता नहीं। अतः मनुष्य को प्रमाद से बचकर अपने प्रत्येक क्षण का अच्छे कार्यों में सदुपयोग करना चाहिए। अच्छे कार्य अर्थात् समग्र मानवता के कल्याण का प्रयत्न मानवता ही क्यों ? प्राणिमात्र के कल्याण से प्रेरित होकर जीवन का सदुपयोग करना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है। श्री जवाहरलाल जी का पुण्य–चरित भी, एक ऐसे ही महात्मा का जीवन चरित है जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन प्राणिमात्र के कल्याण के लिए अर्पित किया। इसीलिए वे हमारे प्रेरणा केन्द्र हैं।

सांसारिक जीवन से उदासीनता

ग्यारह वर्ष की छोटी सी अवस्था में जवाहरलाल जी स्कूल छोड़ कर अपने मामाजी के साथ कपड़े की दुकान पर बैठने लगे। उन्होंने पूर्ण मनोयोग से अपने आपको इस धन्धे में लगा दिया। परिणाम यह हुआ कि कुछ ही दिनों के अनुभव से आपकी इस व्यवसाय में अच्छी गति हो गई। मामाजी इससे बड़े सन्तुष्ट थे और उन्होंने धीरे–धीरे जवाहरलाल जी पर दुकान का सारा कार्यभार डाल दिया। परन्तु भविष्य किसने देखा है। कुछ घटनाएं ऐसी घट जाती है जो एकाएक जीवन की गति को बदलने का कारण बन जाती हैं। दुर्भाग्यवश कुछ ही समय बाद जब जवाहरलाल जी की अवस्था मात्र तेरह वर्ष की थी, उनको स्नेहपूर्ण आश्रय देने वाले मामा श्री मूलचन्द जी धोका भी तेंतीस वर्ष की अल्प आयु में इस संसार से चल बसे।

मामाजी के असामयिक निधन ने किशोरवय जवाहर का मन उद्वेलित कर दिया। बचपन में ही माता–पिता की गोद से वे वंचित हो गए थे और अभी ठीक तरह होश संभाल भी न पाए थे कि मां–बाप का प्यार देने वाले मामा का साया भी उन पर से उठ गया। मामा अपने पीछे विधवा पत्नी और पांच वर्ष के एक मात्र पुत्र को छोड़ गए थे। इनके पालन–पोषण का उत्तरदायित्व भी अब जवाहरलाल जी पर आ पड़ा। जवाहरलाल जी इस उत्तरदायित्व के कारण दुकान का काम अवश्य करते थे पर वे अब संसार से कुछ उदासीन से रहने लगे। सांसारिक जीवन की दुःख–बहुलता ने उनको झकझोर दिया। जीवन की नश्वरता का साकार रूप बार–बार उनकी आंखों के सामने नाचने लगा। जीवन मिथ्या है, यह धन–धान्य सम्पत्ति सब यहीं रह जानी है, ये सब परायी है, इनका मोह झूठा है। संसार का वैभव–विलास जीवन की सफलता की कसौटी नहीं है–इस तरह के विचार अब उनके मन–मस्तिष्क में घूमते रहते। लगातार ऐसे ही विचारों के चिन्तन–मनन का परिणाम यह हुआ कि वे दिन–प्रतिदिन वैराग्योन्मुख होने लगे। जिस दुकान को उन्होंने बड़ी लगन और निष्ठा से चलाया था, अब उसमें उनका मन नहीं लगता था। उन्होंने दुकान उठाने का निश्चय कर लिया। धीरे–धीरे काम समेटना प्रारम्भ किया तथा लेन–देन चुकता करने लगे।

कर्त्तव्य-बोध की उलझन

इस प्रकार मन से विरक्त किशोर जवाहरलाल ने अब वैराग्य लेने का मन ही मन निश्चय कर लिया। उन्होंने सोच लिया था कि यह संसार एक धर्मशाला है। आज नहीं तो कल मुझे इसे छोड़ कर महा प्रस्थान के लिए जाना होगा। फिर समय रहते सांसारिक जीवन के माया जाल से क्यों न मुक्त हो जाऊं ? पर जितना ही वे वैराग्य ग्रहण करने की बात सोचते, स्वर्गीय मामा जी के परिवार के प्रति कर्त्तव्य की बात सामने आ जाती है। वे सोचते, मामा जी के मेरे प्रति कितने उपकार रहे हैं, और मैं विधवा, असहाय मामी तथा उनके पांच वर्षीय पुत्र को अकेला, निस्सहाय छोड़कर वैराग्य लेना चाहता हूं। यह कहां तक उचित है ? जितना ही वे इस सम्बन्ध में सोचते, उतना ही वे विचारों के उलझन में खो जाते। परन्तु विधि का विधान तो कुछ ओर ही था।

उलझन से छुटकारा और साधु संगति

एक दिन वे इसी तरह के विचारों में खोए हुए थे। पांच वर्ष का ममेरा भाई उनके साथ ही लेटा हुआ था। विचारों में द्वन्द्व चल रहा था। तभी उनके अन्तर्मन में प्रश्न उठा – जब मैं पांच वर्ष का था, तब क्या हुआ? इस प्रश्न ने एकाएक ही उनकी समस्या का समाधान कर दिया। वे सोचने लगे, जब मैं दो वर्ष का था, मां की ममताभरी गोद छूट गई, जब पांच वर्ष का हुआ, पिता संसार से चल बसे। उस समय कौन रह गया था मुझे पालने वाला? पर मामा–मामी ने जिस अपनत्व से अपनाया, उसने माता–पिता की पूर्ति करदी। संसार में हर शिशु अपना भाग्य लेकर आता है। मनुष्य अपने को दूसरे का पालन करने वाला मानकर अहंकार ही बढ़ाता है। वस्तुतः पालनहारा कोई और है। मनुष्य क्या किसी का भाग्य विधाता हो सकता है? इस बालक का भी अपना भाग्य है। अगर भाग्य विपरीत है तो कौन मेरा ही आश्रय स्थायी रूप से इसे कैसे मिल सकता है? मेरी कल ही मृत्यु हो जाय तो, क्या इसका पालन हीं नहीं होगा? छि; मैं भी कैसे मिथ्या प्रेम में पड़ा हुआ था। इन विचारों के आते ही उनकी दुविधा दूर हो गई। वैराग्य ग्रहण करने के निश्चय को बल मिला, परन्तु उन्होंने अपना मन्तव्य तुरन्त किसी पर प्रकट नहीं किया। धर्म–ध्यान की ओर अपनी रुचि को बढ़ाते ही गए। अधिकाधिक समय ज्ञान–ध्यान में लगाने लगे।

संयोग से उन्हीं दिनों वहां श्री राजमल जी महाराज के शिष्य मुनि श्री घासीलाल जी तथा मगनलाल जी और श्री घासीलाल जी महाराज के शिष्य श्री मोतीलाल जी व देवीलाल जी पधारे हुए थे। जवाहरलालजी ने इस अवसर का पूरा लाभ उठाया। वे प्रतिदिन उनका प्रवचन सुनते तथा अधिकाधिक साधु–संगति में रहने का प्रयास करते। मुनि–जीवन धारण करने का उनका संकल्प दृढ़ से दृढ़तर हो गया।

वैराग्य-ग्रहण का निश्चय तथा बाधाएं

जवाहर लाल जी मानसिक रूप से वैराग्य ग्रहण करने को पूर्णरूप से तैयार हो चुके थे। दृढ़ निश्चय के साथ उन्होंने अपने विचार अपने ताऊजी श्री धनराज जी (उनके पिता के बड़े भाई) के समक्ष रखे और उनसे मुनि–दीक्षा लेने की आज्ञा मांगी। धनराज जी को उनके विचार

सुनकर कुछ आश्चर्य और दुख हुआ। उनका विचार हुआ कि यह अभी नादान बालक है, समझ अभी है नहीं, सो साधुओं के बहकाने में आ गया है। डांट–फटकार से यह रास्ते पर आ जाएगा। अतः धनराज जी ने उन्हें डांटा फटकारा तथा साधुओं के पास उनका आना–जाना बन्द करवा दिया। इस बात की देखभाल के लिए उन्होंने अपने दो लड़कों को सदा जवाहरलाल जी के साथ रहने का निर्देश दिया। धनराज जी का अपने लड़कों को कठोर निर्देश था कि कोई न कोई हमेशा इसके साथ बना रहे तथा इसे साधुओं के पास न जाने दे। इस प्रतिबन्ध के कारण कुछ समय के लिए जवाहरलाल जी का साधुओं के पास आना–जाना बन्द रहा। पर इस तरह के प्रतिबन्धों से क्या अटल निश्चय बदले जा सके हैं? दृढ़ निश्चयी सोच–विचार कर अपना मार्ग चुनते हैं और फिर उस पर दृढ़ रहते हैं। चाहे कैसी भी बाधाएं आए, कितनी ही कठिनाइयां आ पड़े, कितने भी प्रलोभन उन्हें दिए जाए, वे अपना लक्ष्य नहीं छोड़ते। जवाहरलाल जी भी ऐसे ही दृढ़ निश्चयी, विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी थे।

धनराज जी ने देखा कि जवाहर पर साधुओं का रंग गहरा चढ़ चुका है। साधुओं के पास जाने का प्रतिबन्ध होने पर भी इसके विचारों में कोई परिवर्तन नहीं आया है तो उन्होंने एक अन्य तरीका अपनाया उन्होंने अपने मिलने – जुलने वाले तथा सगे–सम्बन्धियों से यह कहा कि वे जब भी कभी उससे मिले तो उसके सामने सदा साधुओं की निन्दा करें। उसे साधुओं का भय दिखाएं तथा साधुओं को भयंकर रूप से चित्रित करें। सम्भवतः इससे उसके विचारों में कुछ परिवर्तन हो। इसके बाद से जवाहरलाल जी को बड़े–बूढों के मुख से प्रायः इस तरह के विचार सुनने को मिलते–*''बेटा! तुम इन साधुओं के चक्कर में कभी मत फंसना। ये कोमल मति बालकों को बहका कर ले जाते हैं। फिर उनसे अपनी इच्छानुसार काम कराते हैं। उन्हें अपने अनुकूल बनाने के लिए मारते–पीटते हैं तथा तरह तरह से तंग करते हैं। उन्हें भूखा–प्यासा रखते है और कोई लड़का इनकी बात नहीं मानता है तो भयंकर जंगलों में उसे अकेला छोड़ देते हैं।''* आदि आदि।

जवाहरलाल जी बिना कुछ कहे, ये सब बातें सुनते रहते। परन्तु इन सबसे उनके निश्चय में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वैराग्य की चाह

घटने की अपेक्षा और अधिक बढ़ती गईं। यह चाह आत्म जनित थी। जिस व्यक्ति में आत्मज्ञान का दीपक प्रज्वलित हो गया है, उसे दुनियादारी का ज्ञान भुलावे में नहीं डाल सकता। जवाहर लाल जी में आत्म ज्ञान की वह ज्योति प्रज्वलित हो गई थी। फिर उन्हें अपने सोच–विचार कर लिए गए निर्णय से भला कौन विमुख कर सकता था।

धनराज जी किसी भी तरह इसी प्रयत्न में थे कि जवाहर अपना निश्चय छोड़ बैठे। उन्होंने डराने–धमकाने, प्रलोभन देने आदि के सभी प्रयत्न किए, पर जवाहर लाल तो मानो ऐसे चिकने घड़े तुल्य हो गए थे कि जिस पर किसी भी प्रकार के बाधा रूपी जल कण फिसल कर बह जाते थे।

कस्बा लींबड़ी को पलायन तथा साधु-सान्निध्य

इसी प्रकार समय निकलता गया। जवाहरलाल जी को अब पन्द्रहवां वर्ष लग चुका था। इन्हीं दिनों कस्बा लींबड़ी में कुछ मुनिराज पधारे। यह कस्बा थांदला से बारह कोस दूर है। मुनिगण का आगमन जानकर जवाहरलाल जी उनके दर्शन को उत्सुक हो गए। परन्तु तत्क्षण कोई उपाय नहीं था। अतएवं वे अवसर का इन्तजार करने लगे और जैसा कि कहावत है ''जहां चाह वहां राह''। व्यक्ति की दृढ़ इच्छा–शक्ति के सामने मार्ग निकल ही आता है।

कुछ ही दिनों बाद ऐसा अवसर मिला कि जवाहरलाल जी के चचेरे भाई श्री उदयराज जी (धनराज जी के पुत्र) किसी काम से दाहोद जाने के लिए तैयार हुए। दाहोद से लींबड़ी निकट ही है। अतः अवसर अनुकूल जान जवाहरलाल जी भी उदयराज जी के साथ लींबड़ी जाने को तैयार हो गए। एक बैलगाड़ी से उन्होंने यात्रा की। उन दिनों बैलगाड़ी ही एक स्थान से दूसरे स्थान के लिए भारतीय ग्रामीण–अंचल का प्रमुख साधन था। सड़कें थी नहीं, मोटर बसें चलती नहीं थी, साइकिलों का भी सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचलन नहीं हुआ था, अतः बैलगाड़ी का ही सहारा था। कच्चे ऊबड़–खाबड़ मार्ग थे। मार्ग में कठिनाइयां थी। सुनसान जगहों में तथा अन्धकार होने पर रास्ते में लुटने आदि का भी भय था।

जवाहरलाल जी तथा उदयराज जी दोनों दाहोद के लिए रवाना हुए। जैसा कि लिखा जा चुका है जवाहरलाल जी उस समय पन्द्रह वर्ष

के थे तथा उनके चचेरे भाई उदयराज जी सत्तरह वर्ष के। गाड़ीवान भी इनके अनुरूप छोटी ही उम्र का था।

मार्ग में अनास नाम की एक पहाड़ी नदी पड़ती थी। इस नदी में वर्षा काल में तो जल बहता, अन्यथा वह सूखी रहती थी। परन्तु उसकी तलहटी में पत्थरों की बहुलता थी। अनास नदी तक पहुंचते पहुंचते सूर्यास्त हो गया था तथा अंधेरा बढ़ने लगा था। गाड़ी नदी में उतर गई थी, पर ऊपर चढ़ना मुश्किल हो गया। तीनों ने मिलकर बहुत प्रयत्न किया पर बैल तो जैसे थक ही चुके थे। वे ऊपर चढ़ ही नहीं सके। बड़ी भयानक स्थिति थी। रात्रि का गहरा अन्धकार और गहराता जा रहा था। आस–पास सहारे की कोई आशा नहीं। सूनसान स्थल, गहरा जंगल, पथरीला मार्ग। उदयराज जी और गाड़ीवान तो इतने घबरा गए कि जोर–जोरे से रोने लगे। परन्तु निडर व साहसी जवाहर लाल ऐसी विपत्ति में घबराने वाले थोड़े ही थे विपत्ति के सम्बन्ध में उन्होंने अपने विचार बाद में इस रूप में व्यक्त किए –

विपत्ति को सम्पत्ति के रूप में परिणत करने का एक मात्र उपाय यह है कि विपत्ति से घबरना नहीं चाहिए। विपत्ति को आत्मकल्याण का एक श्रेष्ठ साधन समझकर, विपत्ति आने पर पुरुषार्थरत रहते हुए प्रसन्न रहना चाहिए।

कालान्तर में व्यक्त अपने इन विचारों की प्रतिपूर्ति वे स्वयं करते थे। उस संकट की घड़ी में अपने दोनों साथियों को रोते देख वे स्वयं शान्त व स्थिर–चित रहे और उनको धैर्य बंधाया। उनको वहीं छोड़, रात्रि के अन्धकार में वे अकेले ही पास की एक भील बस्ती में सहायता प्राप्त करने की आशा से गए। उस बस्ती में गुलजी तड़वी नामक एक भील युवक उनका परिचित था। वे उसके पास पहुंचे और 10–15 भीलों को साथ लेकर लौटे। उनके प्रयत्नों से गाड़ी को बाहर निकाला गया। रात्रि में वहीं विश्राम कर दूसरे दिन ये लोग दाहोद पहुंचे। इस घटना से भी जवाहरलाल जी के साहस और धैर्य का अच्छा परिचय मिलता है। वे प्रकृति से ही सम्यक्त्व का पालन करने वाले जीव थे। ऐसा व्यक्ति दुख–सुख, विपत्ति–सम्पत्ति, हानि–लाभ, सभी को समान भाव से ग्रहण करता है। सब परिस्थितियों में वह अविचल रहता है। सच्चे साधुत्व के लिए यह प्राथमिक

पहचान है। जवाहरलाल जी उस कसौटी पर प्रारम्भ से ही खरे थे। साधुत्व उनके स्वभाव में था।

सरपंच का पत्र : थांदला लौटा लाने की चाल

दाहोद का काम समाप्त कर जब उदयराज जी थांदला अकेले लौटे तब धनराज जी को ज्ञात हुआ कि जवाहर लींबड़ी में मुनिराजों के सान्निध्य में पहुंच गया है। उन्होंने जान लिया कि पक्षी पिंजरे से निकल चुका है, उसे पुनः लौटा लाने के लिए अब कोई बहाना सोचना होगा। उन्हें एक उपाय सूझा उन्होंने थांदला के तत्कालीन सरपंच शाहजी प्यार चन्द से एक पत्र जवाहरलाल जी को लिखवाया। पत्र में कहा गया था कि तुम थांदला लौट आओ। तुम्हें दीक्षा की आज्ञा दिलवाने की जिम्मेवारी मुझ पर है। इस पत्र को पढ़कर जवाहरलाल जी बड़े प्रसन्न हुए। उन्हें विश्वास हो गया कि अब उन्हें दीक्षा की आज्ञा अवश्य प्राप्त हो जाएगी। अतः वे ध नराज जी के साथ, जो स्वयं पत्र लेकर उन्हें लौटा लिवाने के लिए लींबड़ी गए थे, थांदला लौट आए।

परन्तु धनराज जी ने तो यह एक चाल चली थी। वे जवाहरलाल को दीक्षा की अनुमति नहीं देना चाहते थे। एक बुजुर्ग और संरक्षक के कर्तव्य को ध्यान में रखते हुए संभवतः उनका यह विचार रहा होगा कि अभी यह नादान बालक है। अपना भला–बुरा समझता नहीं है। दुनियादारी से अभी अनभिज्ञ रहा है। साधु बनने की भावना इसकी आत्म प्रसूत नहीं हो सकती। यह बहकावे में आ गया है। साधुत्व के संयम का निर्वाह सरल नहीं है। अतः मेरा कर्तव्य यही है कि इस अबोध तथा भोले किशोर का सही मार्ग–दर्शन करूं। इसीलिए येन केन प्रकारेण वे जवाहर लाल जी को वैराग्य लेने से विरत करने का प्रयत्न करते रहे। डराना, धमकाना, प्रलोभन आदि सभी तरीके उन्होंने अपनाए। फलतः जवाहरलाल जी को थांदला लौटा लाने के बाद वे उन्हें दीक्षा की अनुमति देने से बिलकुल इनकार कर गए। जवाहरलाल जी का सहारा अब थांदला के सरपंच शाहजी प्यार चन्द रह गए। वे उनके पास पहुंचे और उनसे दीक्षा की अनुमति दिलाने को कहा। परन्तु वे बोले, मैंने तुम्हारे बाबाजी (ताऊजी धनराज जी, जिन्हें जवाहरलाल जी बाबा कहते थे) को खूब समझाया मगर वे आज्ञा देने को तैयार नहीं होते। मैं क्या जानता था कि वे इस तरह पलट जाएंगे? उनकी

लिखत मेरे पास होती तो कुछ कार्यवाही भी करता, मगर ऐसा कुछ है नहीं। जितना कह सकता था कह चुका, उन्हें समझा चुका। अब क्या हो सकता है?

सरपंच की यह लाचारी देख कर जवाहरलाल जी को बड़ी निराशा हुई, परन्तु वे भी अवसर का इन्तजार करने के अतिरिक्त क्या कर सकते थे? उनका संकल्प दृढ़ था, मात्र अवसर की प्रतीक्षा थी।

गृह-त्याग

जवाहरलाल जी किसी भी तरह थांदले से निकल कर लींबड़ी साधुओं के सान्निध्य में पहुंच जाना चाहते थे। वैराग्य ग्रहण करने का उनका निश्चय अड़िग था। अतः उन्होंने रास्ता निकाल ही लिया। यह उनका अन्तिम पलायन था, लक्ष्य प्राप्ति की ओर सफल कदम था।

थांदले में भैरा नामक एक धोबी था। उसके पास एक घोड़ा था। वह घोड़े को किराये पर भी चलाने का धन्धा करता था। जवाहरलाल जी ने उससे चुपचाप बातें की और पांच रूपये में उसे लींबड़ी पहुंचाने के लिए तय कर लिया। किसी को पता न चले, इसलिए यह निश्चित किया गया कि भैरा अपना घोड़ा लेकर गांव से अकेला निकल जायेगा और नौगांवा नदी पर दोपहर तक पहुंच कर उनके वहां पहुंचने का इन्तजार करेगा। निश्चयानुसार भैरा नदी पर पहुंचकर इन्तजार करने लगा। इधर जवाहरलाल चुपचाप अवसर देख कर गांव से निकले तथा अपने गन्तव्य के लिए चल दिए। भैरा वहां इन्तजार कर ही रहा था। वहां से घोड़े पर सवार होकर आप लींबड़ी के लिए चल दिए।

लींबड़ी पहुंचने के दो मार्ग थे। एक मार्ग सीधा तथा कम समय वाला था, परन्तु खतरनाक था। रास्ते में पहाड़ तथा जंगल थे। जंगली जानवरों का भी डर था। धोबी उस रास्ते से जाने को तैयार नहीं था। फलतः दूसरे रास्ते से होकर जाना पड़ा। यह रास्ता थोड़ा फेर खाकर था, अतः लम्बा था, परन्तु निरापद था।

जब जवाहरलाल जी लींबड़ी पहुंचे तो उनके ताऊजी श्री धनराज जी वहां पहले ही मौजूद थे। वे खतरे की परवाह न करके सीधे मार्ग से ही वहां पहुंच गए थे। धनराज जी ने जवाहरलाल जी को सब प्रकार से समझाने में कोई कसर बाकी नहीं रखी, परन्तु जवाहरलाल जी अपने

निश्चय पर अडिग रहे। डराने–धमकाने, बहलाने–फुसलाने, अपनी असमर्थता तथा लाचारी बतलाने आदि के सभी उपाय निरर्थक रहे। हारकर श्री धनराज जी निराश मन थांदला लौट आए।

जवाहरलाल जी ने लींबड़ी में रहकर साधुत्व का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने अपना रहन सहन, खान–पान सभी साधुओं की तरह कर लिया। प्रायः आप स्वाध्याय में रत रहते। लगभग आठ माह तक उनका यह क्रम चलता रहा फिर भी श्री धनराज जी उनको साधु–दीक्षा लेने की आज्ञा देने को प्रस्तुत नहीं हुए। तब जवाहरलाल जी ने अपने सगे सम्बन्धियों को इस सम्बन्ध में पत्र लिखे तथा पत्रों में यह भी उल्लेख किया कि या तो आप लोग आग्रह करके मुझे बाबाजी से दीक्षा लेने की आज्ञा दिलवा दें अन्यथा मुझे लाचार होकर किसी अज्ञात स्थान को चले जाना पड़ेगा और फिर कभी मेरा थांदला आना संभव नहीं होगा। इस पत्र के मिलने से सभी सम्बधीगण चिन्ता में पड़ गए। आखिर जाति के प्रतिष्ठित पुरुषों व सम्बन्धियों की एक पंचायत हुई, जिसमें पंचों ने श्री धनराज जी से आग्रह किया कि वे इस परिस्थिति में अब जवाहरलाल को मुनि दीक्षा लेने की आज्ञा दे दें।

मुनि दीक्षा की आज्ञा

धनराज जी सभी तरह के प्रयत्न करके थक चुके थे। अज्ञात स्थान में चले जाने की धमकी से वे भी अधिक विचलित हो गए। उन्होंने सोचा जवाहर का निश्चय अब बदल नहीं सकता। किसी अज्ञात स्थान में चला गया तो उसको देखना भी दुर्लभ हो जाएगा। अतः अच्छा यही है कि मैं इसे आज्ञा दे दूं। अन्यथा वह मानता तो है नहीं। अतः सब प्रकार से सोच विचार कर श्री धनराज जी आज्ञा देने को तत्पर हो गए। वहीं पंचायत में आज्ञा–पत्र तैयार किया गया और श्री जवाहरलाल जी के पास एक पत्र भेज दिया गया जिसमें उल्लेख था कि आपको दीक्षा लेने की आज्ञा दी जाती है।

दीक्षा संस्कार

आज्ञा–पत्र पाकर जवाहर लाल जी की प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा। शुभस्य शीघ्रम्। अतः मार्गशीर्ष शुक्ला द्वितीया वि.सं. 1948 को ही दीक्षा धारण करने का मुहूर्त निश्चित किया गया। तत्सम्बन्धी आमन्त्रण पत्र

भेजे गए। बाहर से अनेक धर्म–प्रेमी सज्जन एकत्रित हुए। निश्चित शुभ–मुहूर्त में श्री जवाहरलाल जी ने जैन भागवती दीक्षा अंगीकार की। आप श्री मगनलाल जी महाराज के शिष्य बने। श्री हुक्मीचन्द जी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री घासीलाल जी महाराज (बड़े) ने आपके दीक्षा संस्कार पूर्ण कराए। जवाहर लाल अब मुनि जवाहर लाल बन गए थे। उनकी चिर अभिलाषा पूर्ण हुई। इस प्रकार सोलह वर्ष की अवस्था में सांसारिक जीवन का त्याग कर वे वैराग्य के मार्ग के पथिक बन गए।

मुनि - जीवन

युवा साधक

सोलह वर्ष की अल्पायु में आत्म साधना के पथ पर बढ़ कर नवयुवक जवाहरलाल ने असीम धैर्य, दृढ़ निश्चय, कठोर संयम और कष्ट सहिष्णुता का परिचय दिया। थांदला का यह नवयुवक जो अब तक कुछ लोगों का ही आत्मीय था, अब मुनि जवाहरलाल के नए रूप में जगत के प्राणि–मात्र का अपना था और प्राणि–मात्र उनके अपने थे।

साधु ज्ञान–मार्ग का पथिक होता है। सत्य को समझना और उसको जन–जन तक पहुंचाना उसका प्राथमिक कर्तव्य है, धर्म है। इसलिए साधु को अध्ययन मनन और चिन्तन का सतत् अभ्यासी होना चाहिए। जैन–साधु परम्परा में इस पक्ष को प्रारम्भ से ही महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। तदनुसार नव–दीक्षित साधु को पहले शास्त्र–ज्ञान में पारंगत किया जाता है।

मुनि श्री जवाहरलाल ने अपने गुरु श्री मगनलाल जी महाराज से शास्त्रों का अध्ययन आरंभ किया। प्रतिभाशाली होने के कारण वे शीघ्र ही शास्त्रीय विषय की गहराई में प्रवेश कर गये। स्मरण–शक्ति की तीव्रता के कारण शास्त्रों की अनेक गाथाऐं और पाठ उन्हें कंठस्थ हो गये। लगन, संयम, मन की एकाग्रता, सेवा भावना, विनम्रता आदि गुणों के कारण मुनि जवाहर लाल सभी साधुओं के प्रिय बन गये।

गुरु-वियोग

मुनि जवाहरलाल को दीक्षित हुए मुश्किल से डेढ़ माह ही हुआ था कि उनके गुरु श्री मगनलाल जी महाराज का पेटलावद में स्वर्गवास हो गया। नवदीक्षित मुनि के लिए यह बहुत बड़ी क्षति थी। थोड़े से समय के सम्पर्क ने ही मुनि जवाहर को अपने गुरु के अत्यन्त निकट ला दिया था। गुरु के असामयिक निधन ने उनके मानस को झकझोर दिया और संसार की असारता को पुनः उनके सामने साकार कर दिया। अब किसी काम में उनका मन नहीं लगता। वे प्रायः एकान्त में बैठकर सोचते रहते।

चित्त-विक्षेप

इस घटना का उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा।

उनका चित्त विक्षिप्त हो गया। बड़ी अद्‌भुत स्थिति आ पड़ी। यह समाचार ज्ञात कर उनके ताऊजी श्री धनराज जी उनको घर लिवा ले जाने के लिए आए। इस कठिन समय में मुनि श्री मोतीलाल जी महाराज ने बड़े धैर्य का परिचय दिया। उन्होंने धनराज की को समझाया तथा मुनि श्री जवाहर लाल को पूरी तत्परता से संभाला।

विक्षिप्त की स्थिति अविश्वसनीय होती है। विक्षिप्त के मन और मस्तिष्क का कोई भरोसा नहीं रहता। वह कब क्या करने की सोच बैठे, कुछ कहा नहीं जा सकता। मुनि श्री जवाहरलाल जी भी कभी जीवन का अन्त करने की बात सोचते, कभी अकेले में जंगल में जाकर तपस्या करने की बातें करते, अपने साथी साधुओं तथा दर्शनार्थी श्रावकों के प्रति भय तथा अविश्वास का भाव रखते, कभी चुपचाप बैठ कर सोचते रहते, बड़े साधु खड़े होने को कहते तो खड़े हो जाते और चलने को कहते तो चल पड़ते। यह पंक्ति 'अरिहंत देव नेड़े, जीने तीन भुवन में कुण छेड़े' प्रायः ऊंचे स्वर से उच्चारण करते और इसमें लीन हो जाते। इस पूरे समय में मुनि श्री मोतीलाल जी महाराज ने बड़े धैर्य, स्नेह और सेवा भावना के साथ युवा मुनि को संभाला।

स्वास्थ्य लाभ

युवा मुनि के इलाज के लिए धार के भक्त श्रावक पन्नालाल जी के प्रयास स्तुत्य है। उन्होंने पहले आयुर्वेदिक डाक्टरों के इलाज की व्यवस्था की परन्तु जब इसका सुपरिणाम नहीं निकला तो ऐलोपैथिक चिकित्सा–पद्धति का आश्रय लिया गया। डाक्टरों ने सिर के पिछले भाग में प्लास्टर लगाया। प्लास्टर लगाने के स्थान पर के गहरे और घुंघराले बालों का युवा मुनि ने स्वयं लोच किया। सिर में से लगभग तीन सेर पानी निकला। वे बेहोश हो गए। अशान्ति और कमजोरी बढ़ गई। परन्तु धीरे–धीरे स्वास्थ्य लाभ होने लगा और आपकी मानसिक अस्वस्थता भी ठीक हो गई।

मानसिक अस्वस्थता का मूल–भय

कालान्तर में मुनि श्री ने इस घटना पर विचार करते हुए 'भय' की भावना को इस अस्वस्थता का मूल कारण बताया। बचपन में 'भूत' का डर उनके अन्तर्मन में बहुत गहरा समा गया था। फिर माता, पिता, मामा आदि की असामयिक मृत्यु का बहुत छोटी सी अवस्था में साक्षात्कार करने वाले

उस बालक के मन में भय गाढ़ा होता गया। भूत के ये संस्कार दीक्षा लेने के बाद भी बने रहे थे। अतः जब दीक्षा के ढेड़ मास बाद ही दीक्षा गुरु श्री मगनलाल जी का देहावसान हुआ तो युवा मुनि पर कुछ ऐसा मानसिक दबाव पड़ा कि वे विक्षिप्त हो गए। लगभग पांच मास वे विक्षिप्त की अवस्था में रहे। उनके जीवन की यह घटना हमारे लिए एक संदेश है कि हमें शिशुओं में निडरता के संस्कार डालने चाहिए। किसी कार्य से विरत करने के लिए उन्हें भयभीत करने का सहारा लेना खतरनाक है, विवेकहीनता है।

धारा नगर में चार्तुमास : काव्य रचना की ओर झुकाव

मुनि श्री का संवत् 1949 का चातुर्मास राजा भोज की प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगरी 'धार' में हुआ। इस चातुर्मास की स्मरणीय बात है मुनि श्री का काव्य रचना की और झुकाव। शास्त्रों के अध्ययन मनन के साथ ही युवा मुनि इन दिनों काव्य रचना में निमग्न रहते। इन दिनों आपने स्तुति परक भक्ति भावना से परिपूर्ण अनेक सुन्दर कविताओं की रचना की।

चातुर्मास के पश्चात विहार करके आप इन्दौर, उज्जैन, बड़नगर, बदनावर होते हुए रतलाम पधारे। रतलाम में उस समय पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी महाराज के सम्प्रदाय के टिप्पणांक तीसरे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य पूज्य श्री उदयसागर जी महाराज विद्यमान थे। मुनि जवाहर लाल जी की कवित्व–प्रतिभा, व्याख्यान शक्ति तथा बुद्धिमत्ता से प्रभावित होकर उन्होंने आशा प्रकट की कि भविष्य में वे एक प्रभावशाली सन्त होंगे। रतलाम से विहार करके आप जावरा होते हुए जावद पहुंचे। उस समय जावद में श्री चौथमल जी महाराज (बड़े) विद्यमान थे। इन्हीं श्री चौथमल जी महाराज के बाद में पूज्य श्री श्रीलालजी म.सा. ने आचार्य पद सुशोभित किया था। मुनि जवाहर लाल जी ने अपनी ज्ञान–साधना और कवित्व प्रतिभा से श्री चौथमल जी महाराज को बड़ा प्रभावित किया। मुनि रूप में जवाहर लाल जी का भविष्य अति उज्ज्वल जानकर चौथमल जी महाराज ने मुनि श्री घासीलाल जी को परामर्श देते हुए कहा 'यह बालक बड़ा प्रतिभाशाली और होनहार है। आपके पास इसे पढ़ाने की सुविधा नहीं है। अगर आपको सुविधा हो तो इसे रामपुरा (होलकर स्टेट) ले जाइए। वहां शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता श्रावक केसरीमल जी रहते हैं। उनसे इसे शास्त्रों का अभ्यास कराइयें।

---

1. दूसरे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य श्री शिवलाल जी म. थे।

रामपुरा-चातुर्मास : आगमों के अध्ययन का सुअवसर

श्री चौथमल जी महाराज के परामर्शानुसार श्री घासीरामजी महाराज ने अपने साधु–वर्ग के साथ रामपुरा की ओर विहार किया तथा संवत 1950 का चातुर्मास रामपुरा में ही किया। मुनि जवाहर लाल जी ने शास्त्रज्ञ श्री केसरीमल जी से आगमों का अध्ययन किया।

जावरा में चातुर्मास : उदीयमान उपदेशक

संवत् 1951 का चातुर्मास 'जावरा' कस्बे में सम्पन्न हुआ। इस चातुर्मास काल में युवा मुनि श्री जवाहरलाल एक सफल प्रवचनकार के रूप में उभरकर जन–समाज के सामने आए। उनकी वाणी के स्वाभाविक ओज, माधुर्य तथा प्रवचन की नवीन शैली ने लोगों को प्रभावित किया। उनके प्रवचनों में जन समूह उमड़ पड़ता था।

थांदला - आगमन

इस चातुर्मास के पश्चात मुनि श्री जवाहर लाल अपनी जन्म भूमि थांदला आए। थांदला के निवासियों ने जिस बालक को मातृ–पितृहीन तथा वस्त्र–विक्रेता के रूप में देखा, उसी को एक प्रभावशाली मुनिराज के रूप में देखकर वे अपने को गौरवान्वित अनुभव करने लगे।

संवत् 1952 का चातुर्मास आपने थांदला में किया।

खाचरौद में चातुर्मास : प्राकृतिक चिकित्सा से साक्षात-परिचय :

मुनि श्री जवाहरलाल जी संवत् 1955 में जब खाचरौद में चातुर्मास कर रहे थे तो आपको 'संग्रहणी' रोग हो गया। उपचार किये गए परन्तु लाभ न हुआ। तभी एक चमत्कारिक घटना घटी।

साधु लोग अपने दैनिक कार्यक्रम में हुए व्याघात के प्रायश्चित स्वरूप अपने लिए कुछ उपवासों के दण्ड का विधान स्वीकार कर लेते हैं। उपवास से आत्म–शुद्धि होती है– मुनि जवाहरलाल जी पर भी इस तरह के प्रायश्चित स्वरूप कुछ उपवास चढ़ गए थे। जब संग्रहणी रोग का उपचार न हुआ तथा यह बढ़ा ही गया तो आपने विचार किया कि कौन जाने यह रोग ही मेरे लिए प्राण–लेवा हो जाए। जीवन का विश्वास भी क्या? अतः मुझे उपवासों का ऋण उतार लेना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने लगातार छः उपवास कर डाले। इसका चमत्कारिक प्रभाव हुआ। वे न केवल ऋण मुक्त हुए अपितु साथ ही रोग मुक्त भी हो गए। इस घटना

से उपवास का प्रत्यक्ष फल उनके सामने प्रकट हो गया। प्राकृतिक चिकित्सा से उनका साक्षात् परिचय हुआ। यह परिचय कालान्तर में प्रगाढ़ होता गया। आगे चलकर उन्होंने अपने अनेक प्रवचनों में उपवास का महत्व प्रतिष्ठापित किया।

साधु समाज के पथ-प्रदर्शक

पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी महाराज के सम्प्रदाय के चौथे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य के रूप में श्री चौथमल जी महाराज ने माघ शुक्ला दशमी संवत् 1954 को यह गुरुतर दायित्व ग्रहण किया। वयोवृद्ध होने के कारण अपने विशाल सम्प्रदाय का संचालन व निरीक्षण उनके लिए अत्यन्त कठिन कार्य था, अतः उन्होंने भिन्न भिन्न प्रान्तों में विचरण करने वाले साधुओं की देखरेख व पथ प्रदर्शन के लिए चार योग्य साधुओं को नियुक्त किया। इसमें मुनि श्री जवाहरलाल जी एक थे। युवा मुनि के लिए यह गौरव की बात थी। यह उनकी प्रतिभा तथा बुद्धिमता का सम्यक् आदर था। इस समय उनकी आयु मात्र 24 वर्ष थी तथा दीक्षा लिए हुए उन्हें आठ वर्ष ही हुए थे।

आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज

आचार्य श्री चौथमल जी महाराज ने संवत् 1956 का चातुर्मास रतलाम में किया। यहां उनकी शारीरिक अस्वस्थता बहुत बढ़ गई थी। कार्तिक शुक्ला अष्टमी की रात्रि को आपका देहावसान हो गया। इससे एक सप्ताह पूर्व ही उन्होंने श्री श्रीलाल जी महाराज को अपना अधिकारी नियुक्त किया था।

मुनि श्री की ख्याति दिनोदिन बढ़ने लगी। जो भी उनके दर्शन करने व प्रवचन सुनने आता, अत्यधिक प्रभावित होता। अनेक जैनेतर लोग जिसमें राजपूत जागीरदार, उच्च पदाधिकारीगण तथा सामान्य व्यक्ति सभी प्रकार के लोग होते थे, उनके उपदेशामृत का पानकर अपने को धन्य मानते। उनकी व्याख्यान–शैली हृदयग्राही थी। उनके कहानी कहने का ढंग अत्यधिक रोचक था। उनकी इसी प्रभावशाली प्रवचन कला का परिणाम था कि संवत् 1962 में उदयपुर चातुर्मास के अवसर पर कसाईयों के मुखिया ने उनकी उपदेश–सभा में खड़े होकर प्रतिज्ञा की –''महाराज। मैं जब तक जीऊंगा कसाईपन नहीं करूंगा। कभी किसी जीव को नहीं मारूंगा और न मांस खाऊंगा मारने के उद्देश्य से बकरा आदि पशुओं का व्यापार भी नहीं करूंगा।''

इस मुखिया ने जीवन–पर्यन्त न केवल उक्त प्रतिज्ञा को निभाया, अपितु अन्य कसाइयों को भी अपना घृणित व्यवसाय छोड़ने को प्रेरित किया। यह मुनि श्री के उपदेशों का चमत्कार था।

इसी प्रकार संवत् 1964 में रतलाम में चातुर्मास के पश्चात मुनि श्री विहार करके बाजणा पहुंचे तो वहां के लगभग 70 गांवों में भील–मुखियाओं ने उनके उपदेशों से प्रभावित होकर पर्वों तथा अन्य अवसरों पर भैंसों तथा बकरों की बलि न करने की प्रतिज्ञा की।

रतलाम में श्री श्वेताम्बर स्थानवासी जैन कान्फ्रेंस के द्वितीय अधिवेशन के अवसर पर भी आपके प्रवचनों की धूम रही। आप एक तेजस्वी व्याख्याता के रूप में प्रतिष्ठित होते गए।

अन्धविश्वासों पर कुठाराघात

संवत् 1967 में इन्दौर में चातुर्मास के पश्चात् आपने महाराष्ट्र की ओर विहार किया। कई वर्षों तक आप महाराष्ट्र में विहार करते रहे। संवत् 1968 का चातुर्मास अहमदनगर में, 1969 का जुन्नेर में तथा 1970 का घोड़ नदी में हुआ।

घोड़नदी में चातुर्मास के अवसर पर मुनि श्री को बुखार आने लगा बुखार जब लम्बा होता गया तो वहां की स्त्रियों को यह विश्वास हो गया कि मुनि श्री को नजर लग गई है। वहां गिरधारी लाल नाम का एक व्यक्ति था, जो लोगों की नजर उतारने आदि के अन्धविश्वास के सहारे ही अपनी जीविका चलाता था। उसके पास एक मोहरा था जिसे वह पानी में रखकर और उस पर अंगूठा रख कर उसे उठाता था। अगर मोहरा उठ जाता तो वह कहता कि देखो मोहरा उठ रहा है। इससे तात्पर्य है कि सम्बन्धित व्यक्ति को नजर लग गई है। प्रायः किसी भी प्रकार की बीमारी के लिए वह इस प्रकार नजर लगने की बात कहता। मुनि श्री के बुखार को भी उसने नजर लगने का कारण बताया।

मुनि श्री को नजर लगने जैसे अन्धविश्वास में बिल्कुल विश्वास न था परन्तु वे मोहरा उठने का मर्म समझना चाहते थे। अतः सब लोगों के चले जाने के पश्चात् उन्होंने मुनि श्री गणेशीलाल जी से मोहरा जैसा एक पत्थर मंगवाया। उसे पानी में रख कर अंगूठे से दबाया। हाथ के साथ ही पत्थर भी ऊंचा उठ आया। मुनि श्री ने दूसरे दिन अनेक स्त्री पुरूषों के सामने मोहरा उठाकर दिखाया और उनका भ्रम दूर किया। उन्होंने अपने

प्रवचनों में मंत्र–तन्त्र नजर, जादू–टोना, भूत–प्रेत, देवी–देवता आदि से सम्बन्धित अन्धविश्वासों पर कुठाराघात किया और लोगों को सच्चे धर्म को समझने की और प्रेरित किया।

गणी पदवी

संवत् 1971 में मुनि श्री जवाहरलाल जी का चातुर्मास जाम गांव में था। उसी समय हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के पांचवे पाट को विभूषित करने वाले आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज रतलाम में विराज रहे थे। चातुर्मास समाप्त होने से पांच दिन पूर्व आपके पैर में अकस्मात तीव्र वेदना प्रारम्भ हो गई। इससे चातुर्मास के पश्चात आपका विहार करना असंभव हो गया। अपनी व्याधि को बढ़ता हुआ देखकर आपने अपने सम्प्रदाय के लगभग 100 साधुओं की देखरेख व सार–संभाल के लिए अपने अतिरिक्त 4 गणी नियुक्त किए। उनमें मुनि श्री जवाहरलाल जी भी एक गणी नियुक्त किये गये।

कर्त्तव्य बोध

दुष्काल के कारण आये दिन हृदय विदारक करुण कहानियां सुनने को मिलने लगी। रोग के कारण परिवार के परिवार नष्ट होने लगे। ऐसे समय में अनुकम्पा से ओत–प्रोत मुनि श्री जी का हृदय दयाद्र हो उठता था तथा वे अपनी संयमी भाषा में, दुखी संक्लिष्ट प्राणियों के दुख निवारण हेतु कर्त्तव्य बोध कराया करते थे। श्रावक श्राविका वर्ग ने अपने कर्त्तव्य को समझा और अपने कर्त्तव्यों की क्रियान्विति स्वरूप समाज ने 200–250 व्यक्तियों की जीवन–निर्वाह सम्बन्धी समुचित व्यवस्था की।

पद-प्रलोभन से परे

संवत् 1973 में घोडनदी में चातुर्मास पूर्ण कर मुनि श्री विहार करते हुए गणिया गांव पधारे। उन्हीं दिनों आचार्य श्री लालजी महाराज ने किसी अपराध के कारण जावरा वाले सन्तों को सम्प्रदाय से अलग कर दिया था। अलग होकर इन लोगों ने अपने एक अलग संगठन स्थापित करने का निश्चय किया। इसके लिए उन्हें एक ऐसे आचार्य की आवश्यकता थी जो अपने प्रभाव, प्रतिमा और वाक्शक्ति के कारण नवीन सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा जमा सके। अतः उनकी दृष्टि मुनि श्री जवाहरलाल जी पर ही गई। मुनि

श्री की सेवा में पहुंच कर उनसे आचार्य पद ग्रहण करने की प्रार्थना की गई। परन्तु मुनि श्री तो ऐसे प्रलोभनों से कोसों दूर थे। वे सच्चे साधु थे, संयम को ही अपने जीवन में सर्वस्व समझते थे। यही नहीं वे तो समस्त स्थानकवासी परम्परा के सम्प्रदायों को एक सूत्र में बांधने के पक्षधर थे, समस्त साधुओं को एक ही आचार्य के शासन में देखना चाहते थे। अतः बार–बार प्रयत्न करने के बाद भी जावरावाले सन्तगण मुनि श्री जवाहरलाल जी को इस प्रलोभन में आकर्षित नहीं कर सके।

सेवा परायणता

1975 में हावड़ा चातुर्मास के अवसर पर दक्षिण प्रान्त में भयंकर दुष्काल पड़ा, साथ ही इन्फ्लूएंजा का भी बड़ा प्रकोप हो गया। मुनि श्री जवाहरलाल जी तथा श्री पन्नालाल जी महाराज को छोड़कर नो अन्य सन्तों को रोग ने धर दबाया। मुनियों की रुग्ण अवस्था में आपने अपूर्व साहस एवं उत्साहपूर्वक निग्लान भाव से प्राकृतिक व मनोवैज्ञानिक पद्धति से सेवा की। फलस्वरूप सभी मुनि कुछ समय पश्चात स्वस्थ हो गये और आपके सेवा परायण जीवन की मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे।

युवाचार्य

इन्हीं दिनों आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज का उदयपुर में चातुर्मास था। उन पर भी इन्फ्लुएंजा का प्रकोप हो गया तथा तीव्र ज्वर रहने लगा। इस समय उन्हें विचार हुआ कि जीवन का कोई भरोसा नहीं, अतः मुझे अपने उत्तराधिकारी का निर्णय कर लेना चाहिए। उन्होंने अपने सम्प्रदाय के मुनिराजों पर दृष्टिपात किया और एकाएक ही उनकी दृष्टि श्री जवाहरलाल जी महाराज पर टिक गई। इस प्रतिभाशाली वक्ता, दृढ़ संयमी सर्वथा सुयोग्य संत को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने का उन्होंने निश्चय कर लिया।

स्वास्थ्य ठीक होते ही उन्होंने विभिन्न स्थानों से दर्शनार्थ एकत्रित अनेक श्रावकों के समक्ष अपने विचार रखे। सभी लोगों ने आचार्य श्री के चुनाव का हार्दिक समर्थन किया तथा प्रसन्नता व्यक्त की। तदनुसार कार्तिक शुक्ला द्वितीया संवत् 1975 के दिन श्री जवाहरलाल जी महाराज को युवाचार्य घोषित किया गया। सूचना भेजी गई। उत्तर न मिलने पर उदयपुर संघ की ओर से कतिपय प्रतिष्ठित श्रावक उनकी सेवा में स्वीकृति हेतु गए। लोगो के आग्रह तथा आचार्य श्री के आदेश को ध्यान में रख कर

मुनि श्री जवाहरलाल जी ने महाराष्ट्र से मध्य प्रदेश की ओर विहार किया। फाल्गुन शुक्ला दशमी को मुनि श्री मोतीलाल जी तथा अन्य मुनियों के साथ आपके रतलाम पधारने पर हजारों दर्शनार्थी नर–नारियों ने आपकी अगवानी की तथा हर्षोल्लास प्रकट किया। आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज पांच दिन पूर्व ही रतलाम पधार चुके थे। अतः मुनि श्री ने रतलाम पहुंचते ही सर्व प्रथम आचार्य श्री के दर्शन किए। चैत्र कृष्णा नवमी बुधवार संवत् 1975 दिनांक 26 मार्च, 1976 को मुनि श्री जवाहरलाल जी युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। इस अवसर पर आयोजित उत्सव में विविध स्थानों से अनेक श्रावक–श्राविकाएं एकत्रित हुए।

इस उत्सव के पश्चात् आचार्य श्री की आज्ञा से युवाचार्य श्री जवाहरलाल जी ने उदयपुर की ओर विहार किया तथा संवत् 1976 का चातुर्मास वहां किया। चातुर्मास के पश्चात् आप चित्तौड़, भीलवाड़ा होते हुए ब्यावर पधारे। आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज भी जावरा में चातुर्मास सम्पन्न कर विहार करते हुए ब्यावर में पहले से ही विराज रहे थे।

इन्हीं दिनों आगरा तथा जयपुर के कतिपय प्रमुख श्रावकों का एक प्रतिनिधि मंडल आचार्य श्री के दर्शन करने ब्यावर आया तथा उनसे निवेदन किया कि मुनि श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा उनके साथी मुनि दिल्ली से विहार कर पधार रहे हैं तथा आपसे साम्प्रदायिक एकता के सम्बन्ध में वार्तालाप को उत्सुक है। अतः अनुरोध को ध्यान में रखकर आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज तथा युवाचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज अजमेर पहुंचे। सम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी विषयों पर वार्तालाप हुआ। अजमेर से विहार करके आचार्य श्री पुनः ब्यावर पधारे और युवाचार्य श्री ने आचार्य श्री के आदेश से बीकानेर की ओर विहार किया।

आचार्य श्री श्रीलाल जी महाराज का स्वर्गवास

ब्यावर से आचार्य श्री जैतारण पधार गए थे। आषाढ़ मास की अमावस्या के दिन प्रवचन देते समय एकाएक आपके नेत्रों की ज्योति बन्द हो गई। सिर चकराने लगा। उन्हें अपनी मृत्यु का पूर्वाभास होने लगा। आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को व्याधि अधिक बढ़ गई। उसी रात्रि को मुनि श्री हरकचन्द जी महाराज ने पूज्य श्री को संथारा करा दिया। रात्रि के पिछले प्रहर में ब्रह्म मुहूर्त में पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज कालधर्म को प्राप्त

हुए। सारा समाज शोक विह्वल हो गया। पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज ने लगभग 32 वर्ष तक प्रव्रज्या का पालन किया, जिसमें 20 वर्ष तक आचार्य पद सुशोभित किया।

आचार्यत्व का उत्तरदायित्व

आचार्य श्री के स्वर्गवास का समाचार मुनि श्री जवाहरलाल जी को भीनासर में प्राप्त हुआ। इस आकस्मिक अवसान ने आपको शोक–निमग्न कर दिया। परंपरानुसार आपको उसी समय आचार्य घोषित कर दिया गया। समाज की सारी व्यवस्था का भार आप पर आ पड़ा। उस समय आप तीन दिवसीय उपवास (तेला) व्रत में थे। इस दुखद वेला में मन की शान्ति के लिए आपने उपवास की अवधि लम्बी कर ली। लोगों के बहुत अनुनय विनय तथा आग्रह के कारण आठ दिन पश्चात उपवास समाप्त किया।

आचार्य - जीवन

धार्मिक आचार्यत्व एक महान उत्तरदायित्व है। धर्माचार्य का समाज पर समग्र प्रभाव पड़ता है। धर्म और समाज अन्योन्याश्रित है अतः समाज में धर्माचार्य का आचरण, उसका व्यक्तिगत जीवन, उसका कर्त्तव्य, उसके विचार सभी पर समग्र समाज की दृष्टि रहती है। धर्माचार्य का आश्रयी साधुवर्ग अपने आचार्य का अनुकरण करता है और उन सब के व्यवहारों से ग्रहस्थ का आचरण प्रभावित होता है। अतः कहना नहीं होगा कि धर्माचार्य के रूप में समर्थ विद्वान, चरित्रवान, दृढ़ संयमी, लोक–कल्याण कारी, प्रभावक व्यक्तित्व और दूरदर्शी विचारक यदि किसी देश अथवा समाज को प्राप्त हो गया है तो वह समग्र देश अथवा समाज के उन्नयन के लिए परम सौभाग्य का अवसर है। तदनुसार मुनि श्री जवाहर लाल जी के रूप में सर्वगुण सम्पन्न व महान प्रभावक व्यक्तित्व वाले आचार्य को प्राप्त करना तत्कालीन श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन समाज के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए महान सौभाग्य था।

आचार्य रूप में प्रथम चातुर्मास

जैसा कि लिखा जा चुका है कि आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज के देहावसान के समय श्री जवाहरलाल जी भीनासर में थे। यहीं उनको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। श्री श्रीलाल जी महाराज के स्वर्गवास से शोकाकुल स्थिति में ही वे भीनासर से बीकानेर पधारे। पूर्व निश्चयानुसार संवत् 1977 का चातुर्मास भी आपने बीकानेर में ही किया। आचार्य के रूप में आपका यह प्रथम चातुर्मास था।

समाजोत्थान की चिन्ता

आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. बड़े सूक्ष्म दृष्टा थे। वे युग प्रधान व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हें समाज में व्याप्त बुराइयों के प्रति हार्दिक क्षोभ था। वे चाहते थे कि समाज आध्यात्मिक, सैद्धान्तिक ज्ञान के ठोस धरातल पर विकास करें। क्योंकि सैद्धान्तिक ज्ञान के अभाव में किया गया विकास समाजोत्कर्ष के लिए हितबद्ध नहीं हो सकता। अतः तत्व ज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु साधु सम्पदा में आपके उपदेश समयज्ञता से पूर्वक हुआ करते थे।

आपके उद्‌बोधनों से समाज को ज्ञान–दर्शन–चारित्र की अभिवृद्धि में रचनात्मक कार्यक्रम अपनाने की प्रेरणा प्राप्त होती थी। बीकानेर चतुर्मास में इसी प्रकार की एक योजना का सूत्रपात हुआ।

बीकानेर, गंगाशहर, भीनासर के समाज के गणमान्य व्यक्तियों तथा बाहर से आमंत्रित समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों की एक सभा सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन झवेरी की अध्यक्षता में हुई। इस सभा में प्रस्ताव स्वीकृत कर 'श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन गुरुकुल' स्थापित करने का निश्चय किया गया। बीकानेर, गंगाशहर, भीनासर समाज की तरफ से इसके लिए विपुल धन राशि के आश्वासन प्राप्त हुए। पर यह योजना तत्काल मूर्त रूप नहीं ले सकी। सात वर्ष पश्चात् 'श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था' की बीकानेर में स्थापना की गई जिसके माध्यम से धार्मिक जागरण, शैक्षणिक विकास और सामाजिक उन्नति व हित के अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए। संस्था के प्रथम सभापति समाज रत्न श्री भैंरूदान जी सेठिया तथा मंत्री श्री जेठमल जी सेठिया निर्वाचित हुए।

खद्दरधारी आचार्य

बीकानेर चातुर्मास के पश्चात् आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज ने उदयपुर की ओर विहार किया। वहां उन्होंने अपने संघ के साधुओं को एकत्र होने की सूचना दी तथा सबकी सहमति से व्यवस्था सम्बन्धी कुछ नियम बनाए।

इन्हीं दिनों उन्हें यह जानकारी मिली कि मील में बनने वाले वस्त्रों में, उन्हें चमकीला तथा मुलायम बनाने के लिए चर्बी का उपयोग होता है। इस प्रकार चर्बी वाले वस्त्रों को घोर हिंसा का मूल समझकर उन्होंने ऐसे वस्त्रों के त्याग का संकल्प कर लिया और हाथ के बने खद्दर के वस्त्र ही धारण करने का निश्चय किया। इसके पश्चात् आजीवन उन्होंने खादी के वस्त्र ही धारण किए तथा महारम्भ एवं परावलम्बन पूर्वक जीवन व्यतीत करने की पद्धति के विरूद्ध अल्पारम्भ एवं स्वावलम्बन के स्वरूप की सुन्दर, विशद एवं व्यापक व्याख्यायें प्रस्तुत की जो सैद्धान्तिक और व्यवहार संगत थी। जिनके कुछ उदाहरण निम्न है –

''तुम जिस देश में जन्में हो, वहां के अन्न, जल और वायु से तुम्हारे शरीर का पालन–पोषण हुआ है, उसी देश में उत्पन्न होने वाली

वस्तुओं के अतिरिक्त दूसरी वस्तुओं का तुम्हें त्याग करना चाहिए।'' स्वदेश की वस्तुओं से तुम्हारा जीवन–निर्वाह सरलता से हो सकता है।

इस प्रकार के विचारों से लोग खादी पहनने के लिए अधिकाधिक प्रेरित हुए। यही नहीं अपने प्रवचनों में इस सम्बन्ध में प्रस्तुत तर्कों द्वारा उन्होंने तत्कालीन रतलाम नरेश जैसे प्रभावशाली खादी की पॉलिश लगे मील के वस्त्र विरोधियों के खादी विरोध को दूर किया। पहनने वालों के लिए उनका एक तर्क यहां उद्धृत है –

''दूध के घड़े में यदि गाय के खून की एक भी बूंद पड़ जाय तो उसे काम में नहीं लाया जाता। उसे अपवित्र समझकर लोग छोड़ देते हैं। किन्तु आश्चर्य की बात है कि गाय की चर्बी लगे वस्त्रों को पहनने में लोगों को संकोच नहीं होता? मित्रों! इन वस्त्रों के लिए कितनी गायों और भैंसों के प्राण ले लिए जाते हैं, क्या आप इसे जानते हैं? ये वस्त्र महा आरम्भ के द्वारा बने हुए हैं, इसलिए आप सभी को ऐसे वस्त्रों का त्याग कर देना चाहिए।

हितेच्छु श्रावक मण्डल की स्थापना

आचार्य श्री जवाहरलाल जी के उद्बोधनों से प्रभावित होकर रतलाम संघ ने संवत 1978 में सामाजिक अस्त–व्यस्त एवं अव्यवस्थित वातावरण को सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित बनाने हेतु 'हितेच्छु श्रावक मंडल' रतलाम की स्थापना की।

महाराष्ट्र की ओर

संवत् 1978 में रतलाम चातुर्मास के पश्चात् आपने महाराष्ट्र की ओर विहार किया। इस विहार का एक कारण था मुनि श्री लालचन्द जी महाराज का आग्रह भरा निवेदन। वे उस समय महाराष्ट्र के चारोली नामक स्थान पर रुग्णावस्था में थे और उनकी अन्तिम इच्छा आचार्य श्री जवाहरलाल जी के दर्शन लाभ की थी। भक्त की इच्छा को ध्यान में रखकर आचार्य श्री ने उग्र विहार किया। परन्तु विधि का कुछ ऐसा विधान बना कि श्री लालचन्द जी महाराज बिना दर्शन–लाभ किए ही चल बसे। मार्ग में आचार्य श्री के साथ में विहार कर रहे मुनि श्री हणुतमल जी रोग ग्रस्त हो गए। मार्ग में अनेक बाधाएं भी उठानी पड़ी। यहां तक कि बालसमंद नामक स्थान पर तो उन्हें ठहरने तक को स्थान न मिल सका।

आहार मिलने की स्थिति तो और भी बदतर रही। मुनि श्री लालचन्द जी महाराज के स्वर्गवास का समाचार जानकर आपने चारोली जाना स्थगित कर दिया। यहां से अहमदनगर संघ के अत्यधिक आग्रह के कारण आपने अहमदनगर की ओर विहार किया। अहमद नगर जिले में उन दिनों दुर्भिक्ष था। आचार्य श्री लोगों के समक्ष अपनी उपदेश सभाओं में प्रायः दुर्भिक्ष का मार्मिक शब्दों में वर्णन करते और इस प्रकार सार्मथ्यवान व्यक्तियों को प्राणीरक्षा की प्रेरणा करते। आचार्य श्री के प्रवचनों से प्रभावित होकर स्थानीय समाज द्वारा दुर्भिक्ष राहत कार्यों की योजना बनाई गई और कार्यारम्भ हुआ।

सार्वजनिक जीवदया मण्डल, घाटकोपर (बम्बई)

आचार्य श्री के संवत् 1980 के चातुर्मास में जीवदया पर आपके प्रभावक प्रवचनों के फलस्वरूप जीवदया मंडल की स्थापना हुई। चातुर्मास के पहले जब आप घाटकोपर से दादर के लिए विहार कर रहे थे तो मार्ग में मांस से भरे टोकरे ले जाते हुए आपकी अनेक लोगों पर निगाह पड़ी। पूछने पर ज्ञात हुआ कि बम्बई में कुरला और बांद्रा के कसाई खाने में प्रतिवर्ष लगभग एक लाख चवालीस हजार गाएं और भैंसे कटती है। दूध का व्यापार करने वाले घोसी गाय–भैंसों को तब तक तो अपने पास रखते हैं जब तक कि वे पर्याप्त दूध देती है। जहां दूध कम हुआ नहीं कि उनका रखना महंगा पड़ जाता हैं अतः वे उन्हें कसाइयों को बेच देते हैं। इस बात को सुनकर आचार्य श्री अत्यन्त दुखी हुए। उनका दिल भर गया। लाख आग्रह के उपरान्त भी उन्होंने बम्बई में प्रवेश करने से ही इनकार कर दिया और दादर से पुनः घाटकोपर चातुर्मास में अहिंसा धर्म का मार्मिक विवेचन प्रस्तुत करते हुए पशु–हिंसा निवारण की लोगों को प्रेरणा दी। इसी प्रेरणा का सुफल सार्वजनिक जीव दया मण्डल की स्थापना है। इस संस्था की पशुशाला में लगभग 600–700 पशुओं का पालन हो रहा है। अनेक गाय–भैंसों को इस संस्था ने कसाइयों के हाथों से बचाया है। दूध देना बन्द कर देने के पश्चात् पशुओं के पालन के लिए संस्था की कई शाखाएं पनवेल, जलगांव, इगतपुरी, गोटी आदि स्थानों में खुल गई है।

अछूतोद्धार

घाटकोपर (बम्बई) में चातुर्मास समाप्त कर जब आचार्य श्री विहार

करते हुए नासिक आए तो अछूतों के साथ सवर्णों के दुर्व्यवहार से दुखी मन हो आपने अछूतोद्धार पर मर्मस्पर्शी प्रवचन किया। अछूतोद्धार आपके प्रवचनों का प्रिय विषय ही बन गया। अछूतोद्धार पर आपके सैंकड़ों प्रवचन है। आपके प्रवचनों से प्रेरित होकर नासिक में सवर्ण जनता ने आश्वासन दिया कि वे अस्पृश्यों के साथ अच्छा व्यवहार करेंगे।

सूदखोरी पर प्रहार

महाराष्ट्र के नान्दुड़ी नामक स्थान पर आचार्य श्री ने पाया कि वहां के अधिकांश जैन सूद पर ऋण देने का धन्धा करते थे। वे अधिक ब्याज वसूल करते थे अतः वहां की गरीब जनता में उनके प्रति बड़ा असन्तोष था। उनके अहिंसा धर्म पर एक प्रवचन को सुनकर जैनत्तर लोगों ने कहा, महाराज! हम लोग भैंसा मारते हैं, परन्तु वे साहूकार लोग अनुचित सूद ले लेकर हम मनुष्यों को मारते हैं। अगर ये लोग अपनी करतूतें छोड़ने को तैयार हैं तो हम भी दशहरा आदि के अवसरों पर भैंसा मारने का त्याग करने को तैयार हैं।

पूज्य आचार्य जी ने जैनों को समझाया और उनकी प्रेरणा से जैनों ने अनुचित और अन्यायपूर्ण सूदखोरी का त्याग किया तथा जैनेत्तर लोगों ने हिंसा का त्याग किया।

रोग का आक्रमण

आचार्य महाराज का संवत् 1981 का चातुर्मास जलगांव में हुआ। यहीं आषाढ़ मास की अमावस्या के आसपास आपकी हथेली में अचानक दर्द होने लगा। हथेली में एक छोटी फुन्सी ने एक भयंकर फोड़े का रूप ले लिया। वेदना बहुत बढ़ गई। हाथ में सूजन बहुत आ गई। स्थानीय डाक्टरों ने कई बार आपरेशन करके फोड़े का मवाद निकाला और मरहम पट्टी की, परन्तु फोड़ा अधिकाधिक विकराल रूप धारण करता गया। बम्बई के एक प्रसिद्ध चिकित्सक मुलगावकर को बुलाया गया। डाक्टरों ने मधुमेह बताया और फोड़े का कारण भी इसी को ठहराया। उनके मधुमेह का इलाज प्रारम्भ किया गया तथा फोड़े का पुनः बड़ा आपरेशन किया गया। आचार्य श्री ने बिना क्लोरोफार्म सूंघे आपरेशन कराने का दृढ़ निर्णय लिया। आपरेशन के समय उन्होंने मुंह से उफ तक नहीं की। इस तरह शरीर की ममता त्याग, आत्मलोक में रमण करते हुए इस महान आचार्य

ने अगाध धैर्य और असीम सहनशीलता से लोगों को चमत्कृत कर दिया।

उत्तराधिकारी का चयन

अपने रोग की निरन्तर बढ़ती अवस्था में उन्हें जीवन की नश्वरता का अहसास अधिकाधिक सोचने विचारने को बाध्य करने लगा। इस मनःस्थिति में उन्होंने अपने उत्तराधिकारी का निर्णय करना उचित समझा। वहां उपस्थित समाज के प्रतिष्ठित लोगों से परामर्श किया गया। तदनुसार उन्होंने मुनि श्री गणेशीलाल जी महाराज को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया।

जलगांव में जैन छात्रावास की स्थापना

इस चातुर्मास काल में आचार्य श्री के प्रबोधन के फलस्वरूप जलगांव में एक जैन छात्रावास की भी स्थापना की गई। यह छात्रावास अभी तक कार्यरत है।

अस्वस्थता के कारण आचार्य श्री लम्बा विहार करने में असमर्थ थे अतः संवत् 1982 का चातुर्मास भी जलगांव में सम्पन्न हुआ। इसके पश्चात् आपने मध्यप्रदेश होते हुए राजस्थान की ओर विहार किया। संवत् 1983 का चातुर्मास ब्यावर में हुआ। इस सारे समय में आचार्य श्री ने अपने व्याख्यानों द्वारा लोगों में सामाजिक व धार्मिक चेतना जागृत की। सामाजिक सुधार के अनेक कार्य हुए। ब्यावर चातुर्मास के पश्चात् बीकानेर की ओर विहार करते समय जयपुर में आपका 24 फरवरी 1937 को तीन घण्टे तक का एक अत्यन्त ओजस्वी चिरस्मरणीय प्रवचन हुआ जिसमें आपने बीड़ी, सिगरेट, भंग आदि मादक द्रव्य, वेश्यागमन, परस्त्री सेवन, कन्या विक्रय, वृद्ध विवाह, अछूतोद्धार, गौरक्षा, संगठन आदि पर बहुत ही ओजस्वी व प्रभावशाली प्रवचन किया। प्रवचन में अपने प्रतिष्ठित अजैन भी उपस्थित थे, जिन्होंने प्रवचन से गद्‌गद् होकर आचार्य श्री के चरण वन्दन करके उनके प्रति अपना भक्तिभाव प्रकट किया। आचार्य श्री के प्रवचनों की एक विशेषता थी साम्प्रदायिक संकीर्णता से मुक्ति और उनकी सार्वजनिकता। उनकी प्रवचन शैली के इस गुण ने उन्हें देश की बहुसंख्यक जनता का प्रिय पात्र बना दिया था। उनके अस्पृश्यता निवारण, बाल–वृद्ध विवाह तथा मृत्युभोज जैसी कुरीतियों के उन्मूलन, चर्बी वाले मिल के बने वस्त्रों तथा अन्य महारम्भी वस्तुओं के निषेध आदि से सम्बन्धित अनेक प्रवचनों को पढ़ कर मानव कल्याण और

समाजोत्थान की उनकी उत्कृष्ट अभिलाषा को सहज ही अनुमानित किया जा सकता है। उनकी इच्छानुसार उनके प्रवचनों में अछूतों को भी सवर्णों के साथ ही मिलकर बैठाया जाता था। वे मनुष्य–मनुष्य के इस भेदभाव के सख्त विरोधी थे।

संवत् 1984 के चातुर्मास (भीनासर–बीकानेर) के पश्चात् आचार्य श्री कई वर्षों तक राजस्थान, दिल्ली तथा हरियाणा की जनता को धर्म प्रबोधन देते रहे। आपने इन्हीं वर्षों में ''सत् धर्म मण्डन'' नामक एक ग्रन्थ की भी रचना की जो सरदार शहर चातुर्मास (सं. 1985) चूरू चातुर्मास (सं. 1986) तथा बीकानेर चातुर्मास (संवत् 1987) में मुख्यतः लिखा गया। आचार्य श्री ने अपने अथक प्रयत्नों से इस क्षेत्र में दया दान की ज्योति प्रज्वलित की तथा समाज सुधार, अछूतोद्धार व खादी के वस्त्र पहनने के अपने प्रिय विषयों पर अनेक प्रवचन करते हुए लोगों की इस ओर रुचि जागृत की।

धर्म और समाज सेवक ब्रह्मचारी वर्ग : एक योजना

संवत् 1988 में देहली चातुर्मास की अवधि में आचार्य श्री ने ब्रह्मचारी संघ बनाने की एक योजना प्रस्तुत की। इस योजाना का उद्देश्य था ग्रहस्थ और साधु वर्ग के बीच में एक ऐसे वर्ग की स्थापना जिसमें वे व्यक्ति समाविष्ट किये जाएं तो ब्रह्मचर्य का अनिवार्य रूप से पालन करें और अकिंचन हो अर्थात् अपने लिए धन संग्रह ना करें। ये लोग समाज की साक्षी में धर्माचार्य के समक्ष इन दोनों व्रतों को ग्रहण करें। ये लोग समाज सुधार और धर्म–प्रचार दोनों ही दृष्टियों से महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं। त्यागी होने के कारण समाज पर इनका प्रभाव स्वाभाविक ही होगा। आचार्य श्री ने इस वर्ग की स्थापना के अपने विचार के पक्ष में निम्न तर्क प्रस्तुत किए, जो विचारणीय हैं और आज के सन्दर्भ में और भी अधिक ध्यान देने योग्य हैं :–

(1) जिन लोगों के हृदय में वैराग्य की प्रवृत्ति है, परन्तु वे साधुत्व का भली भांति पालन करने में असमर्थ हैं, विवशतावश साधु–जीवन अंगीकार करके वे साधुत्व को पूर्णरूपेण प्रति पालन नहीं कर पाते। ऐसे लोग इस वर्ग में सम्मिलित होकर साधु वर्ग को दूषित होने से बचा सकते हैं। साथ ही अपनी वैराग्य वृत्ति की मर्यादा का पालन कर सकते हैं।

(2) यह वर्ग न साधु पद की मर्यादा में बंधा होगा और न ही गृहस्थ के झंझटों में फंसा होगा। अतः इस वर्ग द्वारा सामाजिक व धार्मिक सुधारों के कार्य में श्रावक वर्ग को नेतृत्व प्राप्त हो सकेगा। बहुत से ऐसे कार्य जिन्हें साधु अपनी मर्यादावश सम्पन्न नहीं कर सकता तथा गृहस्थ करने में असमर्थ रहता है, इस वर्ग द्वारा सम्पन्न होने से उनकी मर्यादा में कोई बाधा न होगी।
(3) देश–विदेश में धर्म प्रचार, धर्म सम्मेलनों में अपने धर्म का प्रतिनिधित्व सम्यक शिक्षा, साहित्य प्रकाशन आदि ऐसे कार्य हैं, जो इस वर्ग द्वारा आसानी से सम्पन्न किए जा सकते हैं।

पदवी–प्रदान और अस्वीकृति

दिल्ली की जनता ने आचार्य श्री के प्रति अपनी प्रशंसात्मक भावनाएं प्रकट करने के लिए एक अभिनन्दन समारोह कर उन्हें जैन साहित्य चिन्तामणि तथा जैन न्याय दिवाकर आदि पदवियां प्रदान की परन्तु उन्होंने विनम्रता पूर्वक यह अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार उन्होंने साधुवर्ग के समक्ष एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया। साधु तो अनगार है, अकिन्चन है, उसके लिए पदवी की लालसा ही क्यों हो? साधु को पदवी प्रदान करने की परम्परा आगे चलकर गलत रूप धारण कर सकती है, इस बात को दूरदर्शी आचार्य अच्छी तरह जानते थे।

राष्ट्र–धर्म का निर्वाह और गिरफ्तारी की आशंका

उन दिनों राष्ट्रीय आन्दोलन अपने पूरे जोर पर था। सभी राष्ट्रीय नेता अंग्रेज–सरकार द्वारा जेलों में डाल दिये गए थे। आचार्य श्री यद्यपि धार्मिक नेता थे परन्तु अपने सामयिक उतरदायित्व को भी वे भली भांति समझते थे। यही कारण था कि उनके धार्मिक प्रवचन भी राष्ट्रीयता के रंग में रंगे होते थे। वे स्वयं खद्दरधारी थे, उनकी प्रवचन शैली मनोहारी व ओजस्वी थी, संकीर्ण धार्मिकता से ऊपर उठकर ही वे अपनी बात कहते थे, इस सबका परिणाम यह हुआ कि उनके श्रोताओं में जैन–अजैन का भेद नहीं रहा। जनता का प्रत्येक वर्ग उनके प्रवचनों को सुनने को टूट पड़ता। सरकार को यह भ्रम हो गया कि यह व्यक्ति धर्माचार्य के रूप में कोई नया ही राष्ट्रीय नेता है। उनके पीछे सरकारी गुप्तचर फिरने लगे। इस अवस्था में उनकी गिरफ्तारी की आशंका बढ़ चली। लोगों ने उनसे निवेदन किया कि वे अपने प्रवचन, धर्म की बातों तक ही

सीमित रखें। राष्ट्रीय प्रश्नों को उनमें न आने दे। इससे सरकार का संदेह बढ़ रहा हैं, अतः ऐसा न हो कि वह आपको गिरफ्तार करले और इससे समस्त समाज को नीचा देखना पड़े।

यह सुनकर आचार्य श्री ने सिंहनाद किया– 'मैं अपना कर्त्तव्य भलीभांति समझता हूं। मुझे अपने उत्तरदायित्व का भी पूरा भान है। मैं जानता हूं कि धर्म क्या है मैं साधु हूं, अधर्म के मार्ग पर नहीं जा सकता। किन्तु परतन्त्रता पाप है। परतन्त्र–व्यक्ति ठीक तरह धर्म की आराधना नहीं कर सकता। मैं अपने व्याख्यान में प्रत्येक बात सोच समझकर तथा मर्यादा के भीतर रह कर कहता हूं। इस पर भी यदि राजसत्ता हमें गिरफ्तार करती है तो हमें डरने की क्या आवश्यकता है ? कर्त्तव्य पालन में डर कैसा? साधु को सभी उपसर्ग व परीषह सहने चाहिए, अपने कर्त्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिए। सभी परिस्थितियों में धर्म की रक्षा करने का मार्ग मुझे मालूम है। यदि कर्त्तव्य का पालन करते हुए जैन–समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज के लिए किसी प्रकार के अपमान की बात नहीं है। इससे तो अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने प्रकट हो जाता है।

आचार्य श्री के ये दृढ़ विचार सुनकर लोगों को चुप हो जाना पड़ा। उनके प्रवचनों की धारा निर्बाध रूप से उसी प्रकार प्रवाहित होती रही।

तत्पश्चात् आपने राजस्थान की ओर विहार किया। संवत् 1989 का आपका चातुर्मास जोधपुर में रहा। यहीं कार्तिक शुक्ला 11 को साधु–सम्मेलन आयोजित किये जाने के सन्दर्भ में विचार विनमय हेतु एक शिष्टमण्डल आचार्य श्री की सेवा में उपस्थित हुआ। साधु–सम्मेलन का अजमेर में होना निश्चय रखा गया। तद्नुकूल लम्बी अवधि से की जा रही समस्त तैयारी के बाद दिनांक 5 अप्रेल सन् 1933 तदनुसार चैत्र कृष्णा दशमी को अजमेर में साधु सम्मेलन प्रारम्भ हुआ।

अजमेर साधु–सम्मेलन : वर्द्धमान संघ की योजना [1]

इस सम्मेलन में 26 सम्प्रदायों के लगभग 240 सन्तगण एकत्रित हुए। पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज भी अपने संतों के साथ इस

1 इस योजना की विस्तृत जानकारी के लिए देखिए पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज की जीवनी। (पृ. 206 से 212)

सम्मेलन में भाग लेने अजमेर पधारे। सम्मेलन में भाग लेने वाले मुख्य–मुख्य मुनिराजों से आचार्य का जो वार्तालाप हुआ, उससे उन्हें सम्मेलन में संघ श्रेयस की दृष्टि से कुछ ठोस परिणाम निकलने की आशा न रही।

इस सम्मेलन में आचार्य श्री ने वर्द्धमान संघ की अपनी महत्वपूर्ण योजना प्रस्तुत की। योजना का मुख्य विचार बिन्दु यह था कि साम्प्रदायिक भेदभाव मिटाकर समस्त साधुओं का एक संघ 'वर्द्धमान संघ' गठित किया जाए। संघ का एक ही आचार्य हो और उनकी अधीनता में अनेक उपाचार्य, उपाध्याय प्रवर्त्तक, गणावच्छेदक आदि नियुक्त किए जाय। सभी साधु–साध्वियाँ एक ही आचार्य के अनुशासन में रहे तथा समस्त श्रावक–श्राविकाएं भी वर्द्धमान संघ के मुख्याचार्य को ही अपना धर्माचार्य मानें। सम्मेलन में उपस्थित मुनिराजों ने इस योजना का हार्दिक स्वागत तो किया परन्तु अमल में लाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। फलतः योजना, योजना मात्र बनकर रह गई।

साधु सम्मेलन की कार्यवाही पूर्ण होने के पश्चात् आचार्य श्री ने अजमेर से विहार किया तथा राजस्थान के अनेक गांवों को आपने उपदेशामृत से पवित्र करते हुए संवत् 1990 का चातुर्मास काल उदयपुर में व्यतीत किया।

उदयपुर में हरिजनोद्धार

उदयपुर चातुर्मास के अवसर पर आचार्य श्री के उपदेश से प्रभावित होकर लगभग दो हजार हरिजन भाइयों (चमारों) ने मांस, मदिरा तथा परस्त्री गमन का त्याग किया। आचार्य श्री की व्याख्यान सभाओं में हरिजन वर्ग बेरोक टोक उपस्थित होकर ज्ञान–अर्जित करता था उन्होंने अपने उपदेशों में उच्चकुलाभिमानी व्यक्तियों को प्रायः लताड़ बताई है तथा हरिजनों के प्रति उनको अच्छा व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया है। उनके एक प्रवचन का तत्सम्बन्धी अंश उद्धृत है :–

''मेहतरानी गटर साफ करती है और नगर की जनता को रोगों से बचाती है। वह नगर की जनता की प्राणों की रक्षिका है। उसकी सेवा अत्यन्त उपयोगी और अनुपम है। फिर भी चंवरवाली को बड़ी समझना और मुकाबिले में महतरानी को नीच मानना भूल है, अज्ञान है और कृतज्ञता के विरूद्ध है।''

उदयपुर चातुर्मास के पश्चात् आचार्य श्री देवबाड़ा, नाथद्वारा, निम्बाहेड़ा, बड़ी सादड़ी, कानोड़ आदि स्थानों पर अपने प्रवचनों से जन जागृति व धर्म प्रभावना बढ़ाते हुए फाल्गुन कृष्णा द्वादशी सं. 1990 को जावद पधारे।

जावद में युवाचार्य पद - महोत्सव

अजमेर सम्मेलन के अवसर पर पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी महाराज के दोनों संप्रदायों द्वारा घोषित उत्तराधिकारी मुनि श्री गणेशलाल जी को फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा से पहले युवाचार्य पदवी प्रदान करने का निश्चय कर लिया गया था। इस महोत्सव के लिए जावद के संघ का अत्यधिक आग्रह था। अतः जावद में ही यह महोत्सव करने का निश्चय किया गया। सभी स्थानों पर तत्सम्बन्धी आमन्त्रण भेजे गए तथा सन्तों व सतियों को सूचना दे दी गई। फाल्गुन शु. संवत् 1990 को दिन के ग्यारह से एक बजे तक का समय युवाचार्य पदवी प्रदान करने के लिए निश्चित किया गया। इस समय तक 65 सन्त व साध्वियां तथा लगभग सात हजार दर्शनार्थी विभिन्न स्थानों से आकर जावद में एकत्रित हो चुके थे। शुभ–मुहूर्त में आचार्य श्री ने 'नन्दीसूत्र' का पाठ करके अपनी चादर युवाचार्य श्री गणेशलाल जी महाराज को ओढ़ा कर उन्हें युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। इस अवसर पर आचार्य श्री के उद्‌बोधनों से प्रभावित होकर बिहार के भूकम्प पीड़ितों की सहायतार्थ 'कांफ्रेंस ने भूकम्प रिलीफ फन्ड' स्थापित किया।

वेश्या का उद्धार

संवत् 1991 में आचार्य श्री का चातुर्मास कपासन में सम्पन्न हुआ। चातुर्मास के पश्चात विहार करते हुए आप उदयपुर पधारे। आपके उपदेशामृत का पान करने वालों में उदयपुर की प्रसिद्ध वेश्या मुमताज भी थी। पूज्य श्री के उपदेशों से मुमताज इतनी प्रभावित हुई कि उसने जीवन भर के लिए वेश्यावृत्ति का त्याग कर दिया तथा मांस–मदिरा के सेवन का भी परित्याग कर दिया। वेश्या का जीवन बदल गया। स्थानीय कन्या विद्यालय की प्रधानाध्यापिका ने उसे बहिन कहकर अपने गले लगा लिया। यह पूज्य महाराज के उपदेश का ही प्रभाव था कि एक पतित आत्मा अपने उद्धार का आधार पा सकी।

अधिकार-त्याग

संवत् 1992 में रतलाम चातुर्मास के अवसर पर आचार्य श्री ने मन ही मन निश्चय किया कि वृद्धावस्था के कारण अब मुझे अपने संघ की देखरेख तथा व्यवस्था आदि का उत्तदायित्व युवाचार्य श्री गणेशलाल जी महाराज को दे देना चाहिए। समय रहते बड़ों का अपना अधिकार त्याग करना श्रेयस्कर है ताकि अपने संरक्षण व निरीक्षण में छोटों को उत्तरदायित्व वहन करने का प्रशिक्षण प्राप्त हो सके। इस विचार से प्रेरित हो उन्होंने एक अधिकार पत्र तैयार किया जिसमें अपने संघ के सभी सन्तों व साध्वियों तथा श्रावक–श्राविकाओं को यह सूचित किया गया कि उन्होंने (आचार्य श्री ने) संघ सम्बन्धी सभी कार्यों व नियमों के पालन आदि के लिए संघ को प्रेरित करने तथा सन्त व सतियों को आज्ञा में रखने आदि के समस्त अधिकार युवाचार्य श्री गणेशलाल जी महाराज को दे दिये हैं, अतः सभी उनका आदेश मानें तथा श्री गणेशलाल जी पूर्वजों के गौरव को ध्यान में रखते हुए श्री संघ का कार्य विवेकपूर्वक करें। उन्होंने तत्सम्बन्धी घोषणा अपने आश्विन कृष्णा 11, सोमवार तारीख 13 सितम्बर, सन् 1935 के प्रवचन में की तथा लिखित अधिकार पत्र प्रदान किया।

चातुर्मास के पश्चात् अपने पुनः राजस्थान की ओर विहार किया तथा चित्तौड़, भीलवाड़ा, गुलाबपुरा, विजयनगर, व्यावर, जेठाणा, पाली आदि अनेक स्थानों को पवित्र किया। जेठाणा में पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज तथा आप–दोनों आचार्यों का हार्दिक तथा प्रेममय सम्मेलन हुआ।

आचार्य श्री गुजरात में

गुजरात के लोगों के बहुत समय से हो रहे आग्रह भरे निवेदनों को ध्यान में रखते हुए आचार्य श्री ने गुजरात की ओर विहार किया। पालनपुर, मेहसाणा, वीरमगाम, बढवाण आदि स्थानों पर विचरण करते हुए आप राजकोट पधारे तथा संवत् 1993 का चातुर्मास यहीं सम्पन्न हुआ। गुजरात प्रवेश के पश्चात् से ही आपने गुजराती में प्रवचन देना आरम्भ कर दिया था। राजकोट चातुर्मास के अवसर पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी तथा लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल भी आपसे भेंट करने पधारें। कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को आप श्री की देखरेख में पं. अम्बिका दत्त जी शास्त्री द्वारा तैयार अनुवाद के साथ 'श्री सूयगडांग सूत्र' का प्रकाशन समाज द्वारा किया गया।

हरिजनों को सम्मानजनक स्थान

राजकोट में चातुर्मास के बाद आप गुजरात में ही विहार करते हुए धर्मजागरण करते रहे। जैतपुर का एक प्रसंग उल्लेखनीय है। आपकी प्रवचन सभा में अनेक हरिजन स्त्री–पुरुष भी आए। लोगों ने उन्हें व्याख्यान पीठ से काफी दूर बैठा दिया। आचार्य श्री को उनका यह अपमान सहन नहीं हुआ। उन्होंने उस दिन इस संबंध में प्रभावशाली प्रवचन दिया। परिणाम यह हुआ कि दूसरे दिन से उन्हें आगे बैठने को स्थान दिया गया। आचार्य श्री के उपदेशों से इन लोगों ने मांस–मदिरा का त्याग किया।

पूज्य आचार्य श्री ने अपने प्रवचनों से सारे गुजरात में सामाजिक सुधार व धार्मिक जागरण का वातावरण बना दिया। गुजरात प्रदेश के अनेक शासकों, सामन्तों व जागीरदारों ने भी आपका भावभीना स्वागत किया। इनमें से कइयों ने आपके उपदेशों से प्रभावित होकर अपनी अपनी रियासतों तथा ताल्लुकों में हिंसा पर प्रतिबन्ध लगा दिया। गुजरात में आप जहां भी गए, विशाल जन–समूह आपके स्वागत में उमड़ पड़ा।

संवत् 1994 का चातुर्मास मोरबी में सम्पन्न करने की आप साधुमर्यादा के अनुसार स्वीकृति दे चुके थे। अतः आपने 16 जून को जामनगर से विहार किया। परन्तु लगभग पांच मील ही चल पाये थे कि आपके दाएं पैर में वात का प्रकोप जो पहले भी हो चुका था, पुनः इतना बढ़ गया कि आपका आगे विहार कठिन हो गया। अन्ततः सभी के परामर्श से यही निश्चित रहा कि यह चातुर्मास जामनगर में ही किया जाय।

धार्मिक पर्वों पर खेली जाने वाली जुआबन्दी

मोरबी नरेश तथा वहां के श्री संघ के अत्यधिक आग्रह के कारण आचार्य श्री को संवत् 1995 का चातुर्मास मोरबी में करने को बाध्य होना पड़ा। यहां उनके प्रवचनों में अत्यधिक भीड़ रहा करती थी। जन्माष्टमी के पर्व पर आचार्य श्री ने श्रीकृष्ण चरित पर ओजस्वी व मार्मिक प्रवचन दिया तथा इस अवसर पर व अन्य धार्मिक पर्वों पर खेली जाने वाली जुआ–प्रथा की प्रभावशाली शब्दों में निन्दा की। प्रवचन में मोरबी के राजा तथा अनेक राज्याधिकारी उपस्थित थे। इस प्रवचन का यह परिणाम हुआ कि राजा साहब ने कानून बनाकर जुआ प्रथा बन्द करवा दी और इसके ठेके से होने वाली हजारों की वार्षिक आमदनी का लोभ ठुकरा दिया।

साधु महात्मा : उल्लेखनीय प्रसंग

मोरबी चातुर्मास के पश्चात् विहार करके आप राजकोट पधारे। एक श्रेष्ठ साधु किस प्रकार अपने व्यक्तित्व से लोगों को चमत्कृत कर देता है, इस तथ्य से सम्बन्धित दो प्रेरक प्रसंग यहां उद्धृत किए जा रहे हैं।

(क) भावनगर के एक बोहरा सज्जन उन दिनों अपने एक मित्र के यहां आकर ठहरे हुए थे। यह बोहरा सज्जन गांधी जी के कट्टर भक्त थे और उनका यह पक्का विश्वास था कि हिन्दुस्तान में गांधी जी के अतिरिक्त और कोई सच्चा महात्मा नहीं है। उसके मित्र प्रतिदिन जब आचार्य जी के प्रवचन में जाते तो उससे आचार्य श्री के प्रवचन की प्रशंसा करते हुए प्रवचन में चलने का आग्रह करते। परन्तु उस सज्जन का एक ही उत्तर था कि वह किसी के व्याख्यान नहीं सुनते। सब साधु ढोंगी ही अधिक हैं। मित्र की प्रतिदिन की प्रशंसा और आग्रहवश आखिर तीसरे दिन वह प्रवचन में गए। प्रवचन क्या था, मानो वाणी में जादू का असर था। वह चकित रह गए और बड़ी उत्कण्ठापूर्वक पूरा उपदेश श्रवण करते रहे। उपदेश समाप्त होने के बाद वह आचार्य श्री की सेवा में उपस्थित होकर कहने लगे, *''महाराज! मैं बड़े घाटे में आ गया। तीन दिन से राजकोट में हूं और आज ही उपदेश सुन पाया। दो दिन मेरे वृथा चले गए। अब इस घाटे की पूर्ति करनी होगी। और वह इस तरह की आप भावनगर पधारें। भावनगर की जनता को आपका लाभ दिलवाऊंगा और मैं भी लाभ लूंगा। तब मेरा घाटा पूरा होगा।''* पुनः कहने लगे – ''आप जैसे संत बड़े भाग्य से मिलते हैं। मैं अच्छी तकदीर लेकर आया था कि आपके दर्शन हो गए।''

बोहरा सज्जन भक्ति भाव से गद्गद् हो गए। सभी साधुओं के बारे में उनका जो भ्रम था वह दूर हो गया।

(ख) इसी प्रकार आचार्य श्री के प्रचवन में एक दिन अहमदाबाद के करोड़पति परिवार की सदस्या श्रीमती मृदुला बेन उपस्थित हुई। आचार्य श्री का उदार और प्रभावशाली प्रवचन सुनकर वह कहने लगी – ''साधुओं के विषय में मेरा अनुभव कटु है। मेरा ख्याल था कि साधु हमारे समाज के कलंक हैं। पर आज आचार्य श्री का उपदेश सुनकर मुझे लगा कि मेरा ख्याल भ्रमपूर्ण था। 'सब धान बाईस पंसेरी' नहीं होते सभी साधु एक सरीखे नहीं हैं। मेरा भ्रम दूर करने के लिए मैं पूज्य आचार्य श्री की बड़ी आभारी हूं।''

एक चरित्र सम्पन्न व योग्य व्यक्तित्व किस प्रकार अपने वर्ग, परिवार समाज तथा राष्ट्र का नाम उज्ज्वल कर देता है, ये प्रसंग इसके सुन्दर उदाहरण हैं। साधुवर्ग में कतिपय श्रेष्ठ साधु हो तो वे साधुओं के बारे में, शिक्षित व प्रबुद्धजनों में प्रचलित भ्रान्त धारणाओं को बदल सकते हैं।

संवत् 1996 का चातुर्मास अहमदाबाद में हुआ। इस चातुर्मास काल में आचार्य श्री प्रायः बीमार ही रहे। यह प्रतीत होने लगा था कि उनके दिन अब निकट आ रहे हैं। न उनमें पहले जैसा उत्साह ही दिखाई देता था और न वह गंभीर गर्जना से युक्त तेजस्वी वाणी। लगता था अब उन्हें विश्राम और स्थिरवास की आवश्यकता थी।

अहमदाबाद में चातुर्मास पूरा करने के बाद आचार्य श्री ने पुनः राजस्थान की ओर विहार किया। संवत् 1997 का चातुर्मास आपने बगड़ी में किया। आचार्य श्री अपने जीवन के चोसठ वर्ष पूरे कर चुके थे और अब वृद्धावस्था तथा लगातार बीमारी ने उनको अशक्त बना दिया था। यह समय वस्तुतः अब उनके स्थिरवास का था। इसके लिए विभिन्न स्थानों से उनके पास अनेक लोगों के आग्रह भरे निवेदन थे। अजमेर, ब्यावर, रतलाम, उदयपुर, जलगांव, भीनासर, बीकानेर, जोधपुर आदि स्थानों के लोग उनसे अपने–अपने नगर में विराजने की प्रार्थना बार–बार कर रहे थे। वे बीकानेर की ओर विहार करने की भावना व्यक्त कर चुके थे। मार्ग में वलुंदा नामक स्थान पर वे पुनः अस्वस्थ हो गए। कुछ दिन वहां रूक कर तथा स्वास्थ्य लाभ कर वे नोखा, देशनोक, उदयरामसर, भीनासर होकर बीकानेर पधारे। संवत् 1998 का चातुर्मास उन्होंने भीनासर में बिताया।

श्री जवाहर किरणावली

इस चातुर्मास काल में अशक्ति के कारण आचार्य श्री प्रवचन देने में असमर्थ थे, अतः मुनि श्री श्रीनथमल जी महाराज और मुनि श्री जोहरीमल जी महाराज प्रवचन किया करते थे। आचार्य महाराज व्याख्यान भवन में आकर मौन बैठे रहते थे। जिस तेजस्वी और अद्वितीय वक्ता के प्रवचन सुनकर श्रद्धालुगण अभिभूत हो जाते थे, उसका यह मौन कैसी परवशता थी ? इस परिस्थितियों में भीनासर के श्रद्धालु सेठ श्री चम्पालाल

जी बांठिया के हृदय में यह विचार आया कि पूज्य श्री के प्रवचनों को संकलित व सुसम्पादित कर प्रकाशित किया जाए। तदनुसार पं. शोभाचन्द्र जी भारिल के सम्पादकत्व में ''श्री जवाहर किरणावली'' नाम से कई भागों का प्रकाशन किया गया।

कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को भीनासर में आचार्य महाराज का जन्म दिवस बहुत ही उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर आयोजित सभा में वक्ताओं ने आचार्य श्री के जीवन व कृतित्व पर विस्तार से प्रकाश डाला।

दीक्षा स्वर्ण जयन्ती

मार्गशीर्ष शुक्ला 2 संवत् 1998 तद्नुसार 18 फरवरी, 1942 रविवार को पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज ने अपनी दीक्षा का पचासवां वर्ष पूरा कर लिया था। इस समय आप चातुर्मास समाप्त कर भीनासर से बीकानेर पदार्पण कर गए थे। इस उपलक्ष्य में आपका दीक्षा स्वर्ण महोत्सव सभा श्री संघों द्वारा अपने–अपने स्थानों पर अत्यधिक उत्साहपूर्वक मनाया गया। श्री जैन गुरुकुल ब्यावर में आयोजित सभा में निम्न महत्वपूर्ण प्रस्ताव भी पास किये गए :–

(1) जैन समाज के ज्योतिर्धर, जैन संस्कृति के प्राणरक्षक और प्रचारक परम प्रतापी पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज के साधना के पचास वर्ष पूर्ण करने के अवसर पर ब्यावर जैन गुरुकुल हार्दिक प्रमोद व्यक्त करता है और शासन देव से प्रार्थना करता है कि पूज्य श्री का मार्गदर्शन हमें चिरकाल तक मिलता रहे।

(2) पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज के उपदेश सार्वभौमिक, मौलिक, शास्त्रीय रहस्यों से परिपूर्ण और युग के अनुकूल हैं। उनमें आध्यात्म, धर्म और राष्ट्रीयता की असाधारण संगीति है। ऐसे लोकोपयोगी साहित्य के प्रकाशन और प्रचार की दिशा में सक्रिय होकर विशेष प्रयत्न करने के लिए यह सभा श्री हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम, श्री श्वे. साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था, बीकानेर, श्री जैन ज्ञानोदय सोसाइटी राजकोट तथा अन्य संस्थाओं से अनुरोध करती है।

(3) यह सभा ऐसे महान प्रभावक आचार्य और धर्मोपदेशक के जीवन चरित तथा अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन आवश्यक समझती है और रतलाम हितेच्छु श्रावक मण्डल से आग्रह करती है कि शीघ्र ही पूज्य श्री का जीवन चरित प्रस्तुत किया जाए।

(4) यह सभा जैन समाज की महान विभूति पूज्य श्री जवाहरलाल जी के पचास वर्ष जैसे सुदीर्घ साधक जीवन की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में कोई जीवन्त स्मारक रखने के लिए समाज से साग्रह अनुरोध करती है और समाज के कर्णधारों से प्रार्थना करती है कि इस शुभ अवसर पर कोई महान कार्य अवश्य हाथ में ले और उसे सफल बनावें।

वस्तुतः ये प्रस्ताव बहुत ही महत्वपूर्ण थे और समय आने पर समाज ने इनकी भावना के अनुकूल आचार्य श्री की स्मृति को चिरस्थायी रखने के लिए कार्य भी किया।

महाप्रस्थान

वृद्धावस्था को प्राप्त आचार्य श्री का शरीर अब प्रायः रुग्ण रहने लगा था। अशक्तता अधिक बढ़ गई थी। बीकानेर में उनके घुटने में पुनः दर्द हो गया। वे वहां से भीनासर आ गए तथा सेठ श्री चम्पालाल जी बांठिया के विशाल पोषधशाला भवन में ठहरे। ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा, दिनांक 30 मई, 1942 को उनको पक्षाघात का आक्रमण हुआ और उनका दाहिना भाग शिथिल हो गया। युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज को भी सूचना दी गई। वे भी भीनासर आ पहुंचे। ऐसी स्थिति में आचार्य श्री को अपना अन्त सन्निकट प्रतीत होने लगा। अतः उन्होंने प्राणिमात्र से अन्तिम क्षमायाचना करने का विचार कर 18 जून, 1942 को अपने निम्न उद्‌गार प्रकट किए –

(1) साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध श्री संघ से मैं अपने अपराधों के लिए अन्तःकरण–पूर्वक क्षमा–याचना करता हूं।

(2) मेरा शरीर दिन–प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा है। जीवन–शक्ति उत्तरोत्तर घट रही है। इस बात का कोई भरोसा नहीं है कि इस मौलिक शरीर को छोड़कर प्राण पखेरू कब उड़ जाय। ऐसी दशा में जब तक ज्ञान शक्ति विद्यमान हैं, भले–बुरे की पहचान है तब तक संसार के सभी प्राणियों से विशेषतया चतुर्विध श्री संघ से क्षमायाचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हूं। मेरी आप सभी से विनम्र प्रार्थना है कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करें।

(3) मेरी अवस्था 67 वर्ष की है। दीक्षा लिए भी पचास वर्ष से अधिक हो गए हैं। इस समय में मेरा चतुर्विध संघ से विशेष सम्पर्क रहा है। सं. 1975 से श्री संघ ने तथा पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज साहब ने श्री संघ के शासन का भार मेरे निर्बल कन्धों पर रख दिया था। पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के समान प्रतापी महापुरुष के आसन पर बैठते हुए मुझे अपनी कमजोरियों का अनुभव हुआ था, फिर भी गुरु महाराज तथा श्री संघ की आज्ञा का पालन करना अपना कर्त्तव्य समझकर मैंने उस आसन को ग्रहण कर लिया। इसके बाद शासन की व्यवस्था के लिए मैंने समयोचित बहुत से परिवर्तन और परिवर्द्धन शास्त्रानुसार किए हैं। सम्भव है उनमें से कुछ बातें किसी को गलत या बुरी लगी हों। मैं उनके लिए सभी से क्षमा मांगता हूं।

(4) मैं साधुवर्ग का विशेष क्षमाप्रार्थी हूं। उनके साथ मेरा गुरु और शिष्य के रूप में, शासक और शास्य के रूप में, सेव्य और सेवक के रूप में तथा दूसरे कई प्रकार से घनिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं। मैंने शासनोन्नति के लिए, ज्ञान, दर्शन और चारित्र की रक्षा के लिए, संगठन–वृद्धि के लिए शास्त्रानुमोदित कई नियमोंपनियम बनाए हैं, जिन्हें मुनियों ने सदा वरदान की तरह स्वीकार किया है। फिर भी यदि मेरे किसी व्यवहार के कारण किसी मुनि के हृदय में चोट लगी हो, उन्हें किसी प्रकार का कष्ट पहुंचा हो तो मैं उसके लिए बार–बार क्षमा याचना करता हूं। मेरी आत्मा की शांति और निर्मलता के लिए वे मुझे क्षमा प्रदान करें। मैंने अपनी आत्मा को स्वच्छ एवं निवैर बना लिया है।

(5) अपने संघ का संचालन करने और सामाजिक व्यवस्था करने के लिए मुझे अन्यान्य सम्प्रदायों के आचार्यों तथा बहुत से स्थविर मुनियों के सम्पर्क में आना पड़ा है। किसी बात पर मुझे उनका विरोध भी करना पड़ा है। उस समय बहुत संभव है, मुझसे कोई अनुचित या अविनययुक्त व्यवहार हो गया हो। मैं अपने उस व्यवहार के लिए उन सभी से क्षमा मांगता हूं। मेरी प्रार्थना पर ध्यान देकर वे सभी आचार्य तथा स्थविर मुनि मुझे क्षमा प्रदान करने की कृपा करें।

(6) मैं जिस बात को हृदय से सत्य मानता हूं उसी का उपदेश देता रहा हूं। बहुत से व्यक्तियों से मेरा सैद्धांतिक मतभेद भी रहा है। सत्य का अन्वेषण करने की दृष्टि से उनके साथ चर्चा–वार्ता करने का प्रसंग भी बहुत बार आया है। यदि उस समय मेरे द्वारा किसी प्रकार प्रतिपाक्षियों का मन दुखा हो, उन्हें मेरी कोई बात बुरी लगी हो तो उसके लिए मैं हृदय से क्षमा चाहता हूं। मेरा उनके साथ केवल विचार–भेद ही रहा है। वैयक्तिक रूप से मैंने उन्हें अपना मित्र समझा है और अब भी समझ रहा हूं। आशा है, वे मुझे क्षमा प्रदान करेंगे।

(7) मैंने जो व्याख्यान दिए हैं उनमें से मण्डल ने कई–कई चातुर्मासों के व्याख्यानों का संग्रह कराया है। इस विषय में मेरा कहना है कि जिस समय जो–जो मैंने कहा है, वह जैन–आगमों और निर्ग्रन्थ प्रवचनों को दृष्टि में रखकर ही कहा है। यह बात दूसरी है कि समय के परिवर्तन के साथ–साथ द्रव्य क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार विचारों में भी परिवर्तन होता रहता है। फिर भी मैं छद्मस्थ हूं। मुझ से भूल हो सकती है। मैं सत्य का

गवेषक हूं। सभी को सत्य ही मानना चाहिए। असत्य के लिए मेरा आग्रह नहीं है। मुझे अपनी बात की अपेक्षा सत्य अधिक प्रिय है।

(8) मेरी शारीरिक अशक्तता के बाद और पहले जो साधु मेरी सेवा में रहे हैं, उन्होंने मेरी सेवा करने में कुछ भी बाकी नहीं रहने दिया। अपने कष्टों को भूलकर वे प्रत्येक समय, प्रत्येक प्रकार से मेरी सेवा में तत्पर रहे हैं। स्वयं सर्दी–गर्मी एवं भूख–प्यास के परीषहों को सहकर भी उन्होंने मेरी सेवा का ध्यान रखा है। इसके लिए मैं उनकी सेवा का हार्दिक अनुमोदन करता हूं। उनके द्वारा की गई सेवा का आदर्श, नवदीक्षितों के लिए मार्गदर्शक बनेगा।

(9) लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति के कारण मैंने संघ–शासन का भार युवाचार्य श्री गणेशलाल जी को सौंप रखा है। उन्होंने जिस योग्यता, परिश्रम और लगन के साथ इस कार्य को निभाया है तथा निभा रहे हैं, वह आपके समक्ष है। मुझे इस बात का परम सन्तोष है कि युवाचार्य श्री गणेशलाल ने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का पूर्ण अधिकारी प्रमाणित कर दिया है और कार्य अच्छी तरह संभाल लिया है। साथ में इस बात की भी मुझे प्रसन्नता है कि श्री संघ ने भी श्रद्धापूर्वक इनको अपना आचार्य मान लिया है। इनके प्रति आपकी भक्ति तथा आप सभी का पारस्परित प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहे और इनके द्वारा भव्य प्राणियों का अधिकाधिक कल्याण हो, यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है।

(10) सज्जनों! जिसने जन्म लिया है, उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। संसार में जन्म–मरण का चक्र चलता ही रहता है। यह शरीर तो एक प्रकार का चोगा है जिसे प्राणी स्वयं माता के गर्भ में तैयार करता है और पुराना होने पर छोड़ देता है। पुराने चोगे को छोड़ कर नए–नए चोगे पहनते जाने का क्रम जीव के साथ अनादिकाल से लगा हुआ है। इसमें हर्ष या विषाद की कोई बात नहीं है। हर्ष की बात तो हमारे लिए जब होगी जब इस चोगे को इस रूप में छोड़ेंगे कि फिर नया न धारण करना पड़े। वास्तव में नवीन चोगे का धारण करना ही बन्धन है और उसे उतारना मुक्ति है। जब यह चोगा हमेशा के लिए छूट जाएगा, वही मोक्ष है। अतः यह चोगा छूटने पर भी आत्म–समाधि कायम रहे, यही मेरी भावना है।

(11) अन्त में मैं यही चाहता हूं कि मैंने संसार त्याग करके भगवती दीक्षा स्वीकार की है। उसकी आराधना में जो प्रयत्न अब तक किया है, उसमें

मेरी शारीरिक या मानसिक स्थिति कैसी भी रहे, भंग न हो। उसमें प्रतिदिन वृद्धि हो और मैं आराधक बना रहूं।

आचार्य श्री के ये उद्‌गार व्याख्यान – सभा में पढ़ कर सुनाए गए। सुन कर लोगों के नेत्र सजल हो गए। उन्हें उनके वियोग का अहसास होने लगा था। लगता था जैसे आचार्य श्री के उद्‌गार मृत्यु के पूर्व की घोषणा हो। पूज्य श्री का रूग्ण शरीर और गिरता स्वास्थ्य इसका आभास भी दे रहा है। लोगों का मन बांध उमड़ पड़ा। सभा में विषाद सा छा गया।

आचार्य श्री पक्षाघात से पीड़ित तो थे ही, इधर कमर के पीछे बांई ओर जहरी फोड़ा (Carbuncle) और हो गया। बीकानेर के प्रधान शल्य चिकित्सक डॉ. एलन आपरेशन आवश्यक समझते थे, साथ ही आपरेशन से उत्पन्न खतरे को भी ध्यान में रखा जाना जरूरी था। आपरेशन के बिना ही कुछ दिन बाद यह फोड़ा स्वतः फूट गया। आचार्य श्री इन दिनों की असह्य वेदना को शान्तभाव से सहन करते रहे। फोड़े को बिलकुल ठीक होने में लगभग छः माह का समय लग गया।

इस अस्वस्थता की स्थिति में आचार्य श्री के जीवन का अन्तिम चातुर्मास काल भीनासर में ही व्यतीत हुआ। इस समय देश के विभिन्न भागों से अनेक श्रद्धालु भक्त दर्शनार्थ वहां आए। लोगों को शायद यह अनुमान हो चला था कि आचार्य श्री के संभवतः ये अन्तिम दर्शन ही हैं। अतः पूरे चातुर्मास काल में भीनासर में दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रही।

फोड़ा ठीक हो जाने के पश्चात् आचार्य श्री के स्वास्थ्य में कुछ सुधार हुआ। तभी जुलाई 1943 के आरम्भ में इनकी गर्दन पर भयंकर फोड़ा निकल आया तथा शरीर के अन्य भागों पर भी उसी तरह के छोटे–छोटे कई अन्य फोड़े निकल आए।

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी दिनांक 10 जुलाई 1943 को आचार्य श्री की दशा यकायक अधिक निराशाजनक हो गई। युवाचार्य श्री गणेशलाल जी म. ने पूज्य श्री के कथनानुसार तथा अन्य मुनियों एवं श्री संघ की अनुमति से लगभग पोने बारह बजे तिविहार संथारा[1] तथा पुनः एक बजे चौविहार संथार[2] करा दिया। उसी दिन पांच बजे के लगभग उनकी महान आत्मा ने नश्वर शरीर का बन्धन त्याग कर महाप्रस्थान किया। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. अपने अनेक प्रसंशकों, शिष्यों, श्रद्धालु भक्तों,श्रावक–श्राविकाओं को रोते–बिलखते छोड़ चल दिए।

अन्तिम समय उनके मुख मण्डल पर एक दिव्य शान्ति व सौम्य भाव विराजमान था। लगता था वे गहरी समाधि में लीन हैं। जिसने भी आचार्य श्री की अन्तिम छवि को देखा, वह निहाल हो गया।

अंतिम-यात्रा

आचार्य श्री की अंतिम–यात्रा आषाढ़ शुक्ला 9 को प्रातः प्रारम्भ हुई। सेठ श्री चम्पालाल जी बांठिया ने इस अवसर के लिए एक सुन्दर रजतरथी का निर्माण करवा लिया था। निश्चित समय पर उनकी श्मशान–यात्रा प्रारम्भ हुई। आचार्य श्री का शव स्वर्णमण्डित रजत रथी में रखा गया। पूज्य श्री की शव–यात्रा में राज्य की तरफ से भेजे हुए नगाड़ा, निशान और बैंड सबसे आगे थे। स्त्री–पुरुषों का एक विशाल समूह इस अवसर पर एकत्र था। इस दिन राज्य ने पूज्य श्री के सम्मान में सार्वजनिक अवकाश घोषित किया। सभी कार्यालय, शैक्षणिक संस्थाएं तथा बीकानेर व उसके उपनगरों के समस्त बाजार भी उनके सम्मान में बन्द रहे। भीनासर तथा गंगाशहर में घूमती हुई उनकी शव यात्रा 12 बजे श्मशान में पहुंची। चन्दन, घृत, कपूर, खोपरा आदि सुगन्धित पदार्थों से युक्त चिता पर पूज्य श्री का रजत रथी सहित शव रखा गया तथा अग्नि संस्कार सम्पन्न किया गया।

आचार्य श्री के स्वर्गवास का समाचार समस्त देश में तुरन्त फैल गया। स्थान–स्थान पर शोक–सभाएं आयोजित की गई तथा पूज्य श्री को श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

आषाढ़ शुक्ला 10 को प्रातःकाल 9 बजे बीकानेर, गंगाशहर और भीनासर के चतुर्विध संघ की सम्मिलित शोक सभा हुई। सभा में आचार्य श्री को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद उनकी स्मृति में स्थायी–कोष स्थापित कर समाज सेवा का कोई कार्य करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया। इसके लिए उसी समय लगभग एक लाख रुपये की राशि का प्रावधान हो गया। तदनुसार पूज्य श्री की स्मृति में भीनासर में श्री जवाहर विद्यापीठ नाम से एक संस्था स्थापित की गई।

जीवन-क्रम - उल्लेखनीय तथ्य

महिमावान साधक श्रीमद् जवाहराचार्य जी की जीवन–कथा प्रथम चार अध्यायों में वर्णित है। इस वर्णन में उनके जीवन से सम्बन्धित कतिपय उल्लेखनीय तथ्य छोड़ दिए गए थे ताकि कथा–वर्णन में एकरूपता बनी रहे। यथा–उनके सान्निध्य में आने वाले तत्कालीन भारत के राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र के अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों का उल्लेख, भेंट–वार्ता तथा परिचय उस क्रम में अनावश्यक समझा गया, वह इस अध्याय में स्वतन्त्र रूप से प्रसंगोल्लेख सहित दिया जा रहा है। इसी प्रकार उनके द्वारा दीक्षित मुनिराजों का भी नामोल्लेख इसी अध्याय में किया जा रहा है। उनके जीवन के महत्वपूर्ण वर्ष, तथा चातुर्मास आदि का भी यद्यपि यथाक्रम उल्लेख हो गया है फिर भी उनका एक साथ उल्लेख अपेक्षित समझ कर यहां किया जा रहा है। तात्पर्य यह कि प्रस्तुत अध्याय आचार्य श्री की जीवन–कथा का पूरक अंश है। इस अध्याय में वर्णित तथ्यों से हमें उनके प्रभाव, उनकी लोकप्रियता, उनकी कर्मठता, अपने उद्देश्य के प्रति उनकी निष्ठा तथा राष्ट्र के धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक जीवन में उनकी भूमिका के मूल्यांकन में सहायता मिल सकेगी।

समकालीन विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा सत्संग-लाभ

महात्मा गांधी :-

संवत् 1993 में आचार्य श्री का राजकोट में चातुर्मास था। 29 अक्टूबर को महात्मा गांधी कार्यवश राजकोट आए। उन्हें आचार्य श्री की ओजस्वी उपदेश–शैली, उत्कृष्ट व उदार विचार धारा तथा संयमपरायणता का परिचय मिल चुका था। अतः उन्होंने अपने व्यस्त कार्यक्रम में से पूज्य आचार्य श्री से भेंट करने तथा सत्संगति का लाभ लेने का निश्चय कर लिया। तद्नुसार जिस दिन वे राजकोट से विदा होने वाले थे उस दिन उन्होंने संध्या से कुछ पहले पूज्य श्री के दर्शानार्थ आने की सूचना भिजवा दी। जनता को इसका पता नहीं चल पाया। अतः गांधी जी ने बड़े ही शान्त वातावरण में आचार्य श्री के सत्संग का लाभ उठाया तथा वार्तालाप किया। उन्होनें वार्तालाप के समय अपनी यह भावना भी आचार्य श्री के

समक्ष प्रकट की कि वे उनकी उपदेश सभा में उपस्थित रहकर उपदेश श्रवण के भी इच्छुक थे, पर समयाभाव से यह संभव न हो सका।

लोकमान्य तिलक :-

संवत् 1972 का चातुर्मास अहमद नगर में पूरा करने के पश्चात् आप घोड़ नदी, राजण गांव आदि आस पास के क्षेत्रों में विचरण करते हुए पुनः अहमद नगर पधारे। उन्हीं दिनों लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक कारागार से मुक्त होने के बाद अहमद नगर पधारे थे। श्री कुन्दमल जी पिरोदिया, माणिक चन्द जी मूथा, सेठ किसनदास जी मूथा तथा श्री चंदनमल जी आदि के द्वारा लोकमान्य को आपका परिचय मिला और उन्होंने आपसे भेंट की। आचार्य श्री ने जैन धर्म का दृष्टिकोण तथा सैद्धान्तिक व्याख्या आपके समक्ष प्रस्तुत की। लोकमान्य तिलक इससे बड़े प्रभावित व हर्षित हुए और उन्होनें आचार्य श्री के प्रति अपनी भावनाएं निम्न शब्दों में प्रकट की –

''मैं आचार्य श्री का आभार मानता हूं कि उन्होंने भारतवर्ष के एक महान धर्म के विषय में मेरी गलतफहमी दूर की और उसका शुद्ध आनन्द स्वरूप समझाया।

आज के भारतीय साधु समाज में जैन–साधु त्याग–तपस्या आदि सद्गुणों में सर्वोत्कृष्ट हैं। उनमें से एक आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज हैं। जिनका मैं दर्शन कर रहा हूं और जिनके व्याख्यान सुनने का आनन्द उठा चुका हूं। आप सर्वश्रेष्ठ तथा सफल साधु हैं।

महामना मदन मोहन मालवीय :-

संवत् 1984 में आचार्य श्री जब भीनासर में चातुर्मास पूर्ण कर बीकानेर में पधारे हुए थे, उसी समय मालवीय जी बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में बीकानेर आए। उन्हें आचार्य श्री के बारे में जानकारी मिल चुकी थी। अतः वे उनका प्रवचन सुनने पहुंचे। प्रवचन के पश्चात् मालवीय जी ने आचार्य श्री के प्रवचन की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की और उनके प्रति हार्दिक सद्भाव प्रकट किया।

श्रीमती कस्तूर बा गांधी :-

घाटकोपर (बम्बई) में संवत् 1980 के चातुर्मास काल में श्रीमती कस्तूरबा गांधी पूज्य श्री के दर्शनार्थ आई। पूज्य आचार्य श्री ने अपने

प्रवचन में 'बा' का आदर्श प्रस्तुत करते हुए महिलाओं को खादी पहनने और सादगी से रहने का उपदेश दिया। प्रवचन के पश्चात् 'बा' से भी कुछ बोलने के लिए कहा गया। वे बोली – '' मैं आज अपना अहोभाग्य समझती हूं कि पूज्य श्री के दर्शन हुए। मैं जिस उद्देश्य से आई थी वह पूरा हो गया। मुझे अब बोलने की आवश्यकता नहीं रही। पूज्य श्री ने मेरा मन्तव्य पूरा कर दिया है।

श्री विट्ठल भाई पटेल :-

इसी चातुर्मास काल में केन्द्रीय धारा सभा के प्रेसीडेंट श्रीयुत विट्ठल भाई पटेल भी पूज्य श्री के दर्शन करने का प्रवचन सुनने आए। आचार्य श्री के व्यापक दृष्टिकोण और उच्च विचारों से, उनके तप और त्याग से तथा वक्तत्व शक्ति से बड़े प्रभावित हुए और उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की।

सेनापति बापट

संवत् 1971 में चातुर्मास से पूर्व आचार्य श्री जवाहरलाल जी पारनेर पधारे। उनके दैनिक प्रवचनों में उपस्थित रहने वाले अनेक व्यक्तियों में एक विशिष्ट व्यक्ति थे सेनापति बापट। उनकी स्मरण शक्ति और प्रतिभा का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि वे आचार्य श्री के प्रवचन को सुनने के तुरन्त बाद उसे मराठी कविता में शब्दबद्ध कर सुना दिया करते थे। आचार्य श्री के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी।

बापट साहब का संक्षिप्त परिचय यहां उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नहीं कर पा रहे हैं। विद्यार्थी अवस्था में वे बड़े प्रतिभाशाली थे। आई.सी.एस. की परीक्षा में वे सर्वप्रथम आए। अंग्रेजी नौकरशाही रूपी मशीन का एक पुर्जा बनने के लिए वे इंग्लैण्ड भेजे गए। लाला लाजपतराय की भारत में गिरफ्तारी होने के अवसर पर उन्होंने वहां एक भाषण दिया जो सरकार की आंखों में बहुत खटका। सरकार उन्हें खतरनाक आदमी समझने लगी और पुलिस उन पर निगाह रखने लगी। बापट साहब ने आई.सी.एस. को छोड़ कर वहां रहते हुए बैरिस्टरी की परीक्षा पास की। इंग्लैण्ड से आप जर्मनी चले गए और बम बनाना सीखा तथा भारत आकर नवयुवकों को बम बनाना सिखाया और ब्रिटिश शासन को उखाड़ फैंकने के कार्य में संलग्न हो गए। सरकार उनसे सदैव सतर्क रहती और उनकी निगरानी रखी जाती। उनकी दिनचर्या के महत्वपूर्ण कार्य थे – प्रातः काल

ही टोकरी, कुदाली और झाड़ू लेकर घर से निकल जाना तथा सड़कें व नालियां साफ करना, दिन में अंग्रेजी पत्र–पत्रिकाओं के लिए लेख लिखना, सायंकाल गली–मुहल्लों में जा जाकर देशोत्थान सम्बन्धी प्रवचन करना तथा रात्रि में अछूत बालकों को पढ़ाना।

प्रोफेसर राममूर्ति :-

संवत् 1972 में जब आचार्य श्री अहमदनगर में चातुर्मास कर रहे थे तब कलियुगी भीम कहे जाने वाले प्रो. राममूर्ति अपनी सरकस कम्पनी के साथ अहमदनगर आए। अहमदनगर में मुनि श्री के उपदेशों की उस समय बड़ी प्रसिद्धी थी। प्रो. राममूर्ति भी यह ख्याति सुनकर अपने कार्य कर्ताओं के साथ आचार्य श्री का प्रवचन सुनने आए। आचार्य श्री का प्रवचन सुनकर वे बड़े प्रभावित हुए और प्रवचन के पश्चात उन्होंने कहा – ''इस समय मैं क्या बोलूं? सूर्य के निकल आने पर जिस प्राकर जुगनू का चमकना अनावश्यक है, उसी प्रकार आचार्य श्री के अमृततुल्य उपदेश के बाद मेरा कुछ बोलना अनावश्यक है। मैं न वक्ता हूं न विद्वान हूं। मैं तो एक कसरती पहलान हूं। किन्तु बड़े–बड़े विद्वानों का व्याख्यान सुनने का मुझे शौक है। आज आचार्य श्री के उपदेश को सुनकर मेरे हृदय पर जो प्रभाव पड़ा है वह आज तक किसी के उपदेश से नहीं पड़ा। यदि भारत में ऐसे दस साधु भी हो तो निश्चित रूप से भारत का पुनरुत्थान हो जाए।

जब मैं अपने डेरे से चला तो मुझे यह आशा नहीं थी कि मैं जिनका उपदेश सुनने जा रहा हूं वे मुनिराज इतने बड़े ज्ञानी और इतने सुन्दर उपदेशक हैं। आज मेरा हृदय एक अभूतपूर्व आनन्द से प्रफुल्लित हो रहा है। मैं जीवन भर इस सुन्दर उपदेश को नहीं भूलूंगा।

श्री विनोबा भावे :-

संवत् 1981 में जलगांव चातुर्मास के अवसर पर श्री विनोबा भावे आचार्य श्री का सत्संग करने पधारे। उस समय विनोबा जी तीन–चार दिन तक आपके साथ रहे तथा तत्व चर्चा के मधुर रस का आस्वादन किया।

श्री जमनालाल बजाज :-

उसी चातुर्मास काल में प्रमुख राष्ट्र सेवी सेठ श्री जमनालाल बजाज भी आचार्य श्री के दर्शन करने व उनका सत्संग करने उपस्थित हुए।

सर मनुभाई मेहता :-

श्री मेहता बीकानेर राज्य में प्रधान मन्त्री थे। लन्दन में प्रथम गोलमेज कांन्फ्रेंस में आपने देश का प्रतिनिधित्व किया। संवत् 1984 में आचार्य श्री के भीनासर–बीकानेर में चातुर्मास के समय आप उनकी प्रवचन शैली और व्यक्तित्व तथा विद्वता से इतने प्रभावित हुए कि उनके विशिष्ट श्रद्धालु बन गए। अनेक बार आप सपरिवार आचार्य श्री के प्रवचनों में उपस्थित हुए, गोलमेज कान्फ्रेंस में भाग लेने जाने के अवसर पर भी आप आचार्य श्री के पास मंगल प्रवचन एवं मार्गदर्शन लेने आए।

श्री रामनरेश त्रिपाठी :-

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि और लोक साहित्य के अध्येता विद्वान श्री रामनरेश त्रिपाठी फतहपुरा (राजस्थान) में आचार्य श्री के सम्पर्क में आए और उनके श्रद्धालु बन गए। संवत् 1987 में पूज्य श्री के बीकानेर चातुर्मास के अवसर पर आपने उपस्थित होकर अनेक प्रवचन सुनने का लाभ उठाया पश्चात् हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका सरस्वती में उन्होंने एक लेख प्रकाशित किया जिसकी कुछ पंक्तियां यहां उद्घृत हैं – 'गत वर्ष फतहपुर में श्री जवाहरलाल जी महाराज से मेरा साक्षात्कार हुआ था। उनका चरित्र बहुत ही अच्छा पवित्र और तपस्या से पूर्ण है। वे अच्छे विद्वान, निरभिमानी, उदार, सहृदय और निस्पृह हैं। उनके व्याख्यान में सामयिकता रहती है। वे बड़े निर्भयवक्ता हैं, पर अप्रियवादी नहीं।''

काका कालेकर एवं बुखारी बन्धु :-

आचार्य श्री ने संवत् 1988 में देहली में चातुर्मास किया। इस चातुर्मास काल में उनके प्रभावशाली व्याख्यानों ने उन्हें शीघ्र ही देहली की जैन जैनेतर जनता में प्रिय बना दिया। अनेक हिन्दू व मुस्लिम राष्ट्रीय नेता भी आपके विचारों से प्रेरणा लेने व्याख्यानों में उपस्थित होते। प्रसिद्ध विचारक विद्वान काका कालेकर भी आपके प्रवचन में उपस्थित हुए और आपके राष्ट्रोन्नति सम्बन्धी विचार सुनकर अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की। इसी प्रकार कांग्रेस के तत्कालीन प्रसिद्ध नेता शेख उताउल्लाशाह बुखारी और उनके भाई हबीबुल्ला शाह बुखारी भी आपके व्याख्यान सुनने उपस्थित हुए। व्याख्यान के पश्चात उन्होंने मुक्त कंठ से आचार्य श्री के उपदेशों की प्रशंसा की।

सरदार पटेल :-

संवत् 1993 में राजकोट – चातुर्मास के अवसर पर 13 अक्टूबर को अपरान्ह तीन बजे सरदार बल्लभ भाई पटेल पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे। सरदार पटेल का आगमन सुनकर जेनेतर जनता भी बड़ी संख्या में एकत्र हुई। आचार्य श्री के प्रवचन के बाद सरदार पटेल ने जनता को संबोधित करते हुए कहा – '' आप लोग धन्य हैं, जिन्हें ऐसे महात्मा मिले हैं और जिनके नित्य ऐसे व्याख्यान सुनने को मिलते हैं। मगर यह सुनना तभी सफल है जब उपदेशों को जीवन में उतारा जाय।''

पट्टाभि सीतारामय्या :-

संवत् 1993 में राजकोट चातुर्मास के पश्चात् विहार करके जब आचार्य श्री पोरबन्दर विराज रहे थे तब वहां स्वतंत्रता संग्राम–सेनानी प्रसिद्ध विद्वान व प्रभावशाली वक्ता श्री पट्टाभि सीतारामैया का आगमन हुआ। पूज्य श्री की ख्याति सुन कर आप दर्शनार्थ पधारे तथा पूज्य श्री से मिल कर व वार्तालाप कर बड़े प्रसन्न हुए।

श्री ठक्कर बापा तथा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू :-

संवत् 1994 में आचार्य श्री का चातुर्मास जामनगर में था। वहीं दिनांक 4–10–1937 को स्वतंत्रता संग्राम सेनानी तथा गांधी जी के हरिजनोद्धार कार्यक्रम से सम्बन्धित प्रसिद्ध नेता श्री ठक्कर बापा व श्रीमती रामेश्वरी नेहरू पूज्य श्री के दर्शनार्थ आए तथा उनसे हरिजनोद्धार सम्बन्धी वार्तालाप करके अत्यधिक प्रसन्न हुए।

आचार्य श्री के सान्निध्य में सम्पन्न दीक्षाएं -

नाम	दीक्षा संवत्	दीक्षा का स्थान
श्री राधालाल जी म.	1956	खाचरौद
श्री घासीलाल जी म.	1958	तरावली गढ़
श्री गणेशीलाल जी म.	1962	उदयपुर
श्री पन्नालाल जी म.	1962	उदयपुर
श्री लालचन्द जी म.	1966	जावरा
श्री वक्तावर मल जी म.	1969	चिंचवड़
श्री सूरजमल जी म.	1975	हिवडा
श्री भीमराज जी म.	1979	सतारा
श्री सिरेमल जी म.	1979	सतारा
श्री जीवनलाल जी म.	1979	पूना
श्री जवाहर मल जी म.	1979	पूना
श्री केसरी मल जी म.	1980	घाटकोपर (बम्बई)
श्री चुन्नीलाल जी म.	1981	जलगांव
श्री वीरबल जी म.	1981	जलगांव
श्री सुगाल चन्द जी म.	1983	ब्यावर
श्री रेखचन्द जी म.	1985	चूरू
श्री हमीर मल जी म.	1985	चूरू
श्री चुन्नी लाल जी म.	1989	जोधपुर
श्री गोकुल चन्द जी म.	1989	जोधपुर
श्री मोतीलाल जी म.	1989	जैतारण
श्री फूलचन्द जी म.	1991	कपासन
सुश्री झम्मु बाई म.	1992	रतलाम
सुश्री सम्पत बाई म.	1992	रतलाम
श्री ईश्वर चन्द जी म.	1999	भीनासर
श्री नेमी चन्द जी म.	1999	भीनासर

आचार्य श्री के चातुर्मास

विक्रम संवत्	चातुर्मास स्थान	विक्रम संवत्	चातुर्मास स्थान
1949	धार	1975	हिवडा
1950	रामपुरा	1976	उदयपुर
1951	जावरा	1977	बीकानेर
1952	थांदला	1978	रतलाम
1953	शिवगढ़	1979	सतारा
1954	सैलाना	1980	घाटकोपर (बम्बई)
1955	खाचरौद	1981	जलगांव
1956	खाचरौद	1982	जलगांव
1957	महीदपुर (उज्जैन)	1983	ब्यावर
1958	उदयपुर	1984	भीनासर
1959	जोधपुर	1985	सरदारशहर
1960	ब्यावर	1986	चूरू
1961	बीकानेर	1987	बीकानेर
1962	उदयपुर	1988	देहली
1963	गंगापुर	1989	जोधपुर
1964	रतलाम	1990	उदयपुर
1965	थांदला	1991	कपासन
1966	जावरा	1992	रतलाम
1967	इन्दौर	1993	राजकोट
1968	अहमद नगर	1994	जामनगर
1969	जुन्नेर	1995	मोरबी
1970	घोड़नदी	1996	अहमदाबाद
1971	जाम गांव	1997	बगड़ी
1972	अहमद नगर	1998	भीनासर
1973	घोड़नदी	1999	भीनासर
1974	मीरी		

जीवन-कथा-क्रम : महत्वपूर्ण वर्ष

जन्म : कार्तिक शुक्ला 4 विक्रम संवत् 1932
मुनि–दीक्षा : मार्गशीर्ष शुक्ला 2 वि.संवत् 1948
युवाचार्यत्व : चैत्र कृष्णा 9 संवत् 1975
आचार्यत्व : आषाढ़ शुक्ला 3 संवत् 1977
दीक्षा स्वर्ण–जयन्ती : मार्गशीर्ष शुक्ला 2 वि. संवत् 1998
स्वर्गरोहण : आषाढ़ शुक्ला 8 वि. संवत् 2000

व्यक्तित्व

इतने बड़े संसार में किसी व्यक्ति की क्या गिनती ? वह अनेक में एक है। परन्तु कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो गुणों, और महत् कार्यो के कारण असाधारण बन जाते हैं। व्यक्ति जवाहर से श्रीमद् जवाहराचार्य बनने तक की कथा भी अनेक में विशिष्ट बनने व साधारण से असाधारण बनने की ही कथा है।

थांदला कस्बे का मातृ–पितृविहीन बालक जवाहर, जिसकी माता दो वर्ष का छोड़ स्वर्ग सिधार गई, पांच वर्ष की वय होते–होते पिता का साया जिसका उठ गया, शिक्षा–दीक्षा भी जिसकी सामान्य से अधिक हो नहीं सकी, पर वह अपने क्रांतिकारी व्यक्तित्व, दूरगामी दृष्टि और सयंम–साधना के बल पर एक प्रभावशाली धर्माचार्य के रूप में लाखों लोगों की श्रद्धा व भक्ति का केन्द्र बन गया। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. ने अपने जीवन–काल में राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात तथा महाराष्ट्र के विस्तृत भू–भाग में पद–विहार करके लोगों में धार्मिक चेतना का संचार किया, अनेक सामाजिक कुरीतियों तथा अन्ध विश्वासों से मुक्त कर आध्यात्मिक आधारित जीवन निर्माण की दिशा में उन्हें प्रेरित किया, अछूतों तथा महिलाओं के उद्धार के लिए कई रचनात्मक कार्यक्रम सुझाये, पशुवध तथा पशुबलि के विरूद्ध लोगों को भावनात्मक स्तर पर जागरूक किया। अहिंसा व उनके राष्ट्रीय स्वतंत्रता विषयक उद्‌बोधनों एवं अल्पात्म्य महारम्भ की सम्यक व्याख्याओं से देश में राष्ट्रीय चेतना एवं स्वदेशी वस्तुओं के प्रति ललक पैदा हुई। उनके प्रवचनों से प्रभावित होकर राष्ट्र के विविध क्षेत्रों में कई लोक–कल्याणकारी संस्थाओं के निर्माण की भूमिका तैयार हुई।

उनकी पहुंच रंक से राजा, गरीब से अमीर और सामान्यजन से विशिष्ट व्यक्तियों तक थी। जहां महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, महामना मालवीय, सरदार पटेल, विनोबा भावे जैसे राष्ट्रीय स्तर के विशिष्ट व्यक्तियों को उन्होंने अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रभावित किया, वहीं अनेक राजाओं, नवाबों, सामन्तों, जागीरदारों, उच्च पदस्थ राजकीय अधिकारियों व श्रीमन्तों को अपने उपदेश से प्रभावित कर सरल, सात्विक

जीवन की ओर उन्मुख किया। अपने व्यक्तिगत गुणों यथा दृढ़ निश्चय, अनोखी सूबबूझ, उत्कृष्ट विचार, आदर्श संयम, धर्म निष्ठा, दीन दुखी से प्रेम, ओजस्वी वक्तृत्व–शक्ति, तथा सेवा–भाव के कारण वे अद्वितीय थे। जैन धर्माचार्य होते हुए भी वे अन्य सभी धर्मावलम्बियों में समान रूप से आदरणीय व श्रद्धास्पद थे। किसी भी धर्म का, किसी भी जाति या सम्प्रदाय का जो भी व्यक्ति उनके सम्पर्क में आया, वह उनका अपना हो गया, उसके मन में उनके प्रति गहरी श्रद्धा पैदा हो गई। उदयपुर की वैश्या मुमताज, कसाइयों के मुखिया किशना पटेल, अनेक अछूत, दलित, पीड़ित उनके दर्शन व उपदेश–श्रवण से अपना जीवन सुधार सके। अनेकों ने दुष्कृत्य छोड़े, दुर्व्यसन त्यागे और हिंसक कर्मों का परित्याग कर अपने जीवन को निष्कलंक बनाने में प्रवृत्त हुए। इतना प्रभाव इतना सारा काम, इतनी बड़ी जागृति किसी साधारण व्यक्ति के सामर्थ्य की बात नहीं। यह सब आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. के असाधारण व्यक्तित्व और प्रभाव–गरिमा के कारण ही संभव हो सका।

वे जन्मना ही साहसी, सूझबूझ के धनी और दृढ़ निश्चयी थे। चाहे घटना बाल्यावस्था में पहाड़ी ढलान पर से गाड़ी के लुढ़कने की हो (देखिए प्रथम अध्याय 'विकट परिस्थिति में सूझबूझ और साहस' शीर्षक) – सभी स्थितियों में उन्होंने साहस, सूझबूझ, अगाध धैर्य और असीम सहनशीलता का परिचय कराया।

आचार्य श्री विकट परिस्थितियों से जूझने में जहां वज्रादपि कठोर थे वहां दलितों, पीड़ितों के प्रति फूल से कोमल थे। उनका हृदय करूणा का निर्झर था। संवत् 1975 के भयंकर दुष्काल तथा इन्फ्लूएंजा के प्रकोप के समय, जिस किसी ने भी उन्हें अपने साथी साधुओं की स्वयं तन–मन से सेवा करते, और अपने उपदेशों के द्वारा लोक मानस को पीड़ित लोगों की सहायता के लिए आत्मनाभूति की प्रेरणा करते देखा है, वह उनकी करूणा, उनकी वत्सक्तता ओर उनके सेवाभावी परदुखकातर व्यक्तित्व से अभिभूत हुए बिना नहीं रहा। जीव मात्र के प्रति उनकी दया व करूणा के साकार प्रतीक, सार्वजनिक जीवदया मण्डल घाटकोपर (बम्बई), मीरी आदि स्थानों पर स्थापित गौशालाएं हैं।

एक धर्माचार्य होते हुए भी उनका प्रगाढ़ राष्ट्र प्रेम व स्वदेशी

आन्दोलन के प्रति संयमित निष्ठा उनके व्यक्तित्व का उज्ज्वलतम पक्ष है। राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन के अत्यधिक विषम दिनों में उन्होंने धर्माचार्य के आसन से देश की स्वतन्त्रता को प्रबल अभिव्यक्ति दी। उनका कहना था – परतन्त्रता पाप है। परतन्त्र व्यक्ति ठीक प्रकार से धर्म की आराधना भी नहीं कर सकता।'' स्वदेशी वस्तुओं के हटाने अपने कर्त्तव्य का भान कराते हुए उन्होंने कहा – 'तुम जिस देश में जन्में हो, वहां के अन्न, जल और वायु से तुम्हारे शरीर का पालन–पोषण हुआ है, उसी देश में उत्पन्न होने वाली वस्तुओं के अतिरिक्त तुम्हें दूसरी वस्तुओं का त्याग करना चाहिए।

वे बड़े प्रभावक वक्ता थे। जिसने भी उनकी ओजस्वी वाणी, प्रेरक विचार सुने वह सदा–सर्वदा के लिए उनका प्रशंसक बन गया, उनका भक्त हो गया। वे निर्भय वक्ता थे परन्तु अप्रियवादी नहीं थे। उनके प्रवचन संकीर्ण साम्प्रदायिकता से मुक्त व सार्वजनिक होते थे। यही कारण था कि उनके प्रवचनों मं जैन–अजैन, हिन्दू–मुस्लिम, स्वर्ण–अवर्ण, भले–बुरे, राजा–रंक सभी की भीड़ बनी रहती थी। राजकोट (गुजरात) का एक प्रसंग इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। भावनगर के एक बोहरा सज्जन अपने मित्र के अत्यधिक आग्रह और आचार्य श्री के प्रवचन की अत्यधिक प्रशंसा सुनने के बाद तीसरे दिन आचार्य श्री के प्रवचन में उपस्थित हुए। जैसे ही उन्होंने उनकी प्रभावक वाणी सुनी वे चकित हो गए। कहां तो वे सभी साधुओं को ढोंगी मानते थे और उनका मानना था कि भारत में गांधी जी के अतिरिक्त कोई सच्चा महात्मा ही नहीं है। कहां अब वे आचार्य श्री के प्रति भक्तिभाव से अभिभूत हो, अत्यधिक भावावेश में उनसे निवेदन करने लगे 'महाराज! मैं बड़े घाटे में आ गया। तीन दिन से राजकोट में हूं और आज ही उपदेश सुन पाया। दो दिन मेरे वृथा चले गए। अब इस घाटे की पूर्ति करनी होगी, और वह इस तरह कि आप भावनगर पधारें। भावनगर की जनता को आपका लाभ दिलवाऊंगा और मैं स्वयं भी लूंगा। आप जैसे संत बड़े भाग्य से मिलते हैं। मैं अच्छी तकदीर लेकर आया था कि आपके दर्शन हो गए। एक अजैन, कट्टर विरोधी व्यक्ति के द्वारा आचार्य श्री का एक ही प्रवचन सुनने के बाद प्रकट किए गए ये उद्‌गार उनकी वाणी के जादू के सच्चे उद्‌घोषक हैं।'

आचार्य श्री सभी प्रकार के पद–प्रलोभन, निन्दा–स्तुति, मान–अपमान से ऊपर अपनी आत्मा की मस्ती में ही विचरण करने वाले व्यक्ति थे। वे महान् तपस्वी और सच्चे साधक साधु पुरुष थे। सभी प्रकार की संकीर्णता से परे थे। जैनियों की साम्प्रदायिक एकता के प्रबल पक्षधर थे। उनकी वीर संघ की योजना[1] उनके परिपक्व अनुभव, व्यावहारिकता ओर सूझबूझ का उदाहरण है। अनेक गुणों से मण्डित उनका व्यक्तित्व समग्र प्रभाव छोड़ने वाला था। उनके महाप्रस्थान के दुखद अवसर पर प्रेषित अनेकानेक श्रद्धांजलियों में उनके समकालीन सम्पर्क–सान्निध्य में आने वाले साधुओं, राज पुरुषों, कवियों–लेखकों आदि ने उनके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो उद्‌गार प्रकट किए हैं उनमें से कतिपय अंश यहां उद्‌घृत किए जा रहे हैं। इससे उनके प्रभावक व्यक्तित्व की एक झांकी मिल सकेगी।

(1)

पूज्य श्री का साहित्य 'जीवन साहित्य' है। उसने सुप्त समाज में जागरण पैदा किया है। साधुधर्म और गृहस्थ धर्म के पृथक्करण में वास्तविक मार्ग का प्रदर्शन किया है। वर्तमान बीसवीं शताब्दी में, जैन आचारों का महत्व यदि किसी ने नवीन दृष्टिकोण से संसार के सामने रखा है और साथ ही पुरातन संस्कृति का भी संरक्षण किया है तो वह पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज है। उन्हें जितना भूतकाल का पता है उतना ही वर्तमान काल का पता है और इन सब से बढ़ कर पता है भविष्य काल का। अतएवं आप समाज की प्रत्येक परिस्थिति का एक चतुर वैध की भांति निदान करते हुए हमारे सामने उस परिस्थिति के उपचार और परिचालन का आदर्श उपस्थित करते हैं। वर्तमान जैन समाज के पूज्य श्री बहुत बड़े आध्यात्मिक वैद्य हैं, जिनकी चिकित्सा–प्रणाली अमोघ है। जिनके अहिंसा और सत्य के प्रयोगों से हजारों दुष्कर्म दूषित आत्माएं आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त कर चुकी हैं।

– पूज्य श्री पृथ्वी चन्द जी म.

1. काल की अपरिपक्वता के कारण यह योजना उस समय क्रियान्वित न हो सकी। अब आचार्य श्री के जन्म शताब्दी वर्ष में कार्तिक शुक्ला चतुर्थी सं. 2032 तद्‌नुसार 7 नवम्बरी, 1975 को देशनोक में समतादर्शन के प्रणेता आचार्य श्री नानालालजी म. सा. के सान्निध्य में इस योजना का शुभारंभ किया जा चुका है। इस योजना के परिचय के लिए इस पुस्तक का परिशिष्ट देखिए।

(2)

निःसन्देह पूज्य श्री जवाहरलाल जी इस समय के आचार्यों में एक श्रेष्ठ और माननीय आचार्य हैं जिनके उपदेश से श्री जैन संघ में बहुत सी उन्नति हुई हैं और इस समय जैन साहित्य में जो सुन्दर–सुन्दर पुस्तकें उपलब्ध हो रही हैं, उनका सारा यश इन्हीं पूज्य श्री को हैं।

– महास्थविर गणि श्री उदयचन्द जी म.

(3)

आपकी भाषण शैली बड़ी ही चमत्कृतिपूर्ण है। जिस किसी भी विषय को उठाते हैं, आदि से अन्त तक उसे ऐसा चित्रित करते हैं कि जनता मन्त्रमुग्ध हो जाती है। चार–चार, पांच–पांच हजार जनता के मध्य आपका गंभीर स्वर गरजता रहता है, और बिना किसी शोरोगुल के श्रोता दक्षचित्त से एकटक ध्यान लगाए सुनते रहते हैं। बड़ी से बड़ी परिषद् पर आप कुछ ही क्षणों में नियन्त्रण कर लेते हैं। आपके श्रीमुख से वाणी का वह अखण्ड प्रवाह प्रवाहित होता है कि बिना किसी विराम के, बिना किसी परिवर्तन के, बिना किसी खेद के, बिना किसी अरुचि के, निरन्तर अधिकाधिक ओजस्वी, गम्भीर, रहस्मय एवं प्रभावोत्पादक होता जाता है। व्याख्यान में कहीं पर भी भाव और भाषा का सामंजस्य टूटने नहीं पाता। प्राचीन कथानकों के वर्णन का ढंग, आपका ऐसा अनुपम एवं सुरुचिपूर्ण है कि हजार–हजार वर्षों के जीर्ण–शीर्ण कथानकों में नव जीवन पैदा हो जाता है। आप की विचारधारा आध्यात्मिक, तीक्ष्ण, सूक्ष्म एवं गंभीर होती है। सहसा किसी व्यक्ति का साहस नहीं पड़ता कि आपके विचारों की गुरूता को किसी प्रकार हल्का कर सके या उसे छिन्न–भिन्न कर सके। आपका कल्पनाशील मस्तिष्क व विचारों की इतनी अच्छी ऊर्वरा भूमि है कि प्रत्येक व्याख्यान में नए से नए विचार, नए से नया आदर्श, नए से नया संकल्प उपस्थित होता है।

– आचार्य श्री आत्मारामजी म. एवं
कविरत्न उपाध्याय श्री अमर मुनि जी

(4)

आप धीर, वीर और प्रभावक तथा प्राचीनता का न्याय युक्ति से शोधन करने वाले थे। आपकी उपदेश शैली स्था. समाज में आदर्श समझी जाती है। आपके प्रवचन क्रान्तिकारी एवं सुधार के विचार को लिए रहते

हैं। इन उपदेशों ने जिस सम्प्रदाय के आप आचार्य हैं, उनमें ही नहीं, किन्तु स्था. समाज में क्रान्ति की लहर उत्पन्न कर दी है।

– आचार्य श्री हस्तीमल जी म.

(5)

पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज अपने समाज के उज्ज्वल रत्न हैं। आपके अध्ययन में गंभीरता है, भावों में विशदता है, विचारों में विशालता है। यही नहीं आपका वक्तित्व भी प्रभावशाली, विशुद्ध, व्यापक और युगानुसारी है। भाषा में सरलता, संपतता और अलंकृति है। शैली प्रवाहमयी, रसोद्भिन्न और प्रौढ़ है।

– मुनि श्री मिश्रीमल्ल जी 'मधुकर'

(6)

पराक्रमियों की पाशविक शक्ति अपने भय द्वारा लोगों से अपने सामने अपनी आज्ञा आज भी मनवा सकती है, परन्तु गाय बछड़ें की भांति अपने पीछे लोगों को रखने वाली सत्पुरुषों की दैवी शक्ति और उनकी विश्व प्रेम की भावना ही है। हम आज 'जैन जवाहर' का इस हेतु अनुसरण कर सकते हैं कि उनके सहारे से अपने भक्त हृदय को विकसित कर उनके साथ आत्मविकास कर सकें।

– महासती श्री उज्ज्वल कंवर जी

(7)

आचार्य श्री जवाहरलाल जी में महान दार्शनिक तत्वों को ऐसी सरल भाषा में प्रकट करने की कला है जिसे साधारण जनता भी आसानी से समझ सकती है। देश के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों में रहे हुए सत्य के प्रति आपके उदार सहानुभूति पूर्ण विचार हैं। विवाद अथवा चर्चा वाले विषय को सहनशीलता एवं न्याय के साथ प्रकट करने का आपका ढंग बहुत प्रशंसनीय है।

– सर मनुभाई मेहता
तत्कालीन प्रधान मंत्री, बीकानेर (राज.)

(8)

महाराज श्री जवाहरलाल जी महान उपदेशक ही नहीं किन्तु महान आत्मा है। आपकी सहानुभूति जैन साधु संस्था या सिद्धान्तों तक ही सीमित नहीं है किन्तु उनके बाहर भी दूर तक फैली हुई है। मेरी कामना

है कि भारत वर्ष में पूज्य श्री के समान बहुत से धर्मोपदेशक हों जिससे साम्प्रदायिक कटुता दूर हो जावे। आपके परिचय में आने के बाद में अपने व्यक्तित्व को कुछ उन्नत अनुभव कर रहा हूं।

– श्री त्रिभुवन जे, राजा
तत्कालीन प्रधानमंत्री, रतलाम स्टेट

(9)

उनकी विद्वता, भावप्रवणता, वाग्धारा एवं व्याख्यान तथा अभिव्यंजना की सरसता ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। अपने अनुयायियों के हित की तीव्र भावना से प्रेरित होकर वे सामाजिक कार्यों में बड़ी रूचि लेते हैं।

– राव साहब श्री अमृत लाल टी. मेहता
भूतपूर्व दीवान पोरबन्दर, लीमड़ी और धर्मपुर स्टेट

(10)

महात्मा श्री पोते जैन धर्म ना आचार्य महापंडित छै अने महान् उपदेशक छै। परन्तु पोताना व्याख्यान मां सर्वधर्म मां थी बोधिक दाखला दृष्टान्तों आपी सर्वधर्म नु सरखापणुं बतावी श्रोताजनो मां दुनियाना सर्वधर्मो प्रत्ये मानबुद्धि उत्पन्न करावे छै। कोई पण धर्म नी निंदा करवी के सांभलवी तेमां पाप माने छै अने मनावे छै। तेओ श्री कुरानशरीफ, गीता, रामायण, भागवत, बाईबल आदि ग्रन्थों नो अभ्यास करी वाकेफी मेलवी चुक्या छै।

– अब्दुलगफुर नूरमहम्मद बलोच
कामदार मटियाणा स्टेट, जूनागढ़

(11)

आप की सादगी, नम्र व्यवहार, सहनशीलता तथा सौहार्द ने मुझे एकदम प्रभावित कर लिया। आपका विद्वत्तापूर्ण वार्तालाप श्रोताओं के हृदय को हर लेता है। आपका सत्संग करते समय प्रत्येक व्यक्ति ऐसा अनुभव करता हैं जैसे वह अपने किसी मित्र के साथ बैठा हो और विभिन्न विषयों पर बातचीत कर रहा हो। आप में न तो पवित्रता के दिखावे की झलक है ओर न उदासी से भरी हुई गंभीरता है। शान्त, स्वस्थ, संयत तथा शुद्ध आचारका औचित्य आप सरीखे ज्ञानी मुनि के उच्च तथा विशाल मस्तिष्क का परिचय देता है। कुछ धार्मिक विषयों पर मैंने आपसे संक्षिप्त वार्तालाप किया। धर्मों के पारस्परिक व्यवहार के विषय में मैंने जो प्रश्न पूछे, आपने उनका संतोषपूर्ण समाधान किया। उस से मेरे मन में आया कि आप एकता

के प्रेमी तथा ईश्वरी सत्य का आदर करने वाले महापुरुष हैं। कहलपूर्ण विचार आपको पसन्द नहीं है।

– काजी ए. अख्तार
जागीरदार, जूनागढ़ स्टेट

(12)

चरित्र गठन, तपबल, आदर्शधर्म दृढ़ता, संयमशीलता, शास्त्र निपुणता एवं विद्वता आपके प्रवचन श्रवण के पहले ही प्रथम दर्शन मात्र से दर्शक को हृदयंगम होकर उसे प्रभावित कर देती है। यदि ऐसे सौ पचास महात्मा भी इस समय विद्यमान होकर देश सेवा, समाज सेवा एवं धर्म प्रसार में अपना सर्वस्व लगा दें तो गृह, समाज एवं राष्ट्र का महान उद्धार होकर उन्नत दशा की प्राप्ति अवश्यमेव सुलभ हो सकती है।

– मेहता तेजसिंह कोठारी,
तत्कालीन जिलाधीश, उदयपुर।

(13)

महाराज श्री की हम कितनी प्रशंसा करें ? प्रतिभाशाली देह, मधुर वाणी, तेजस्वी मुखारविन्द, गद्य पद्य दृष्टान्त तथा शास्त्रीय प्रामाणों से भरपूर प्रवचन। केवल जैन जनता के लिए ही नहीं किन्तु जामनगर की अन्य जनता के लिए भी महाराज श्री का प्रवचन रुचिकर तथा आकर्षक था। न किसी की निन्दा न किसी के प्रति बुरे विचार, विवाद में भी उदार और उदात्त भावना आदि अनेक गुणों से आकृष्ट होकर विद्वान मध्यान्ह और संध्या समय पूज्य श्री के पास धर्मचर्चा के लिए आते थे।

– डॉ. प्राणजीवन माणिकचन्द्र मेहता
तत्कालीन चीफ मेडिकल ऑफिसर, नवानगर स्टेट

(14)

पूज्य श्री की विद्वता, व्याख्यान, गम्भीरता, विवेचन शक्ति की पटुता, सैद्धान्तिक तात्विक रहस्योद्घाटन की दक्षता ही उनकी मुख्य विशेषताएं हैं। आप श्री के व्याख्यानों में एक ऐसी चमत्कारान्विता शक्ति की प्रधानता रहती है जो कि जैन व जैनेतर सभी जनसमुदाय के हृदय पर समान रूप से धार्मिक प्रभाव अंकित करती है।

– श्री शंभूनाथ मोदी, तत्कालीन सेशन जज, जोधपुर

(15)

कथा कहने की उनकी शैली निराली थी। साधारण से साधारण कथानक में वे जान डाल देते थे। उसमें जादू–सा चमत्कार आ जाता था। उन्होंने अपनी सुन्दरतर शैली, प्रतिभामयी भावुकता एवं विशाल अनुभव की सहायता से कितने ही कथा पात्रों को भाग्यवान बना दिया है। वे प्रायः पुराणों और इतिहास में वर्णित कथाओं का ही प्रवचन करते थे पर अनेकों बार सुनी हुई कथा भी उनके मुख से एकदम मौलिक और अश्रुतपूर्व–सी जान पड़ती थी।

– पं. शोभाचन्द भारिल्ल, ब्यावर

(16)

आचार्य श्री की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। राष्ट्रीय सामाजिक, आध्यात्मिक नैतिक अथवा व्यावहारिक ऐसा कोई भी विषय नहीं है जिस पर आपने अधिकार पूर्ण विवेचन न किया हो। आप की वाणी में जादू था। बिल्कुल साधारण सी बात को प्रभावशाली एवं रोचक बनाने में आप सिद्धहस्त थे। सभी धर्म तथा सभी सिद्धान्तों का समन्वय करके नवनीत निकालने की कला अद्‌भुत रूप से विद्यमान थी। जीवन कला के आप महान कलाकार थे। वैयक्तिक तथा सामाजिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में आप की कला अव्याहत थी। आपके उपदेश सभी मार्गों के संगम स्थल थे।

– डॉ. इन्द्र चन्द्र शास्त्री, दिल्ली

(17)

लम्बा कद, गौरवर्ण, विशाल भाल, तेजोमय सुदीर्घ नेत्र, चमकता हुआ ललाट, दीर्घ मस्तक, मुखमण्डल की अपूर्व कांति, ये सब पूज्य श्री के भौतिक शरीर की उत्कृष्टता को सूचित करते थे। उनकी उत्कृष्ट शारीरिक सम्पदा, देखने वाले एक अनजान व्यक्ति को भी एकदम प्रभावित किये बिना न रहती थी। उनकी आवाज बड़ी बुलन्द थी। जब वे व्याख्यान मण्डप में बैठ कर व्याख्यान फरमाते थे तब ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई सिंह गर्जना कर रहा हो। जो व्यक्ति एक वक्त उनके दर्शन कर लेता था उसके हृदय पर उनकी तेजोमय सौम्य मूर्ति की छाप सदा के लिए अमिट हो जाती थी। वह उन्हें कभी भूलता न था। जो एक वक्त उनका व्याख्यान श्रवण कर लेता था वह सदा के लिए उनका श्रद्धालु भक्त बन जाता था।

उनके व्याख्यान में जादू की सी शक्ति थी। उनका व्याख्यान तात्विक होता था। उसमें शब्दाडम्बर नहीं होता था। वे शब्दों की आत्मा को पकड़ते थे और उसमें गहरे उतरकर तत्व विश्लेषणपूर्वक विचार करते थे। गहन से गहन तत्वों की थाह लेने की उनमें क्षमता थी। उनमें ज्ञान, दर्शन, चारित्र, रूप रत्नत्रय का त्रिवेणी संगम था।

– पं. घेवरचंद बांठिया 'वीरपुत्र'

(18)

नर देह में वह देव था, सिद्धांत का वह भक्त था।
व्यवहार में वह दक्ष था, कर्त्तव्य पर आसक्त था।।
उसमें सभा चातुर्य था, वह वाक्–पटुता का धनी।
अति ओज वाणी में भरा था, शान उसकी थी घनी।।
प्रभाविष्णुता उसमें अलौकिक, ज्ञान का भण्डार था।
निर्भीक,तार्किक, शास्त्र–ज्ञाता, शील का अवतार था।।

– श्री तारानाथ रावल

(19)

जो सदाचार के उदयाचल, दुर्व्यसन–तिमिर के भास्कर थे।
सन्ताप हरण, मृदुवचन, शान्ति में, जो अकलंक सुधारक थे।।
जो कटुवाद – कुहेस दिवस थे, धर्म वीरता में बे–जोड़।
पूज्यपाद वे आज जवाहर, कहां गए भक्तों को छोड़।।

– श्री त्रिलोकीनाथ मिश्र

(20)

दिव्यं धर्म दिवाकर कलियुगे व्याप्तेऽपि विद्योतयन्,
पारखण्डं परिखण्डयन् प्रतिदिनं सम्मण्डयन् सज्जनान्।
कारूण्यं समुपादिशंश्च निरतं विद्यां परां वर्धयन्,
श्री जैनेन्द्र जवाहर यतिवरो जीव्याज्जगत्यां चिरम्।।

– श्री गजानन्द शास्त्री

(21)

हम सबके पथ में प्रभुवर तुम,
ज्ञान प्रदीप सजग करते।
हम सबको धर्मामृत देकर,
तुम सत्पथ पर ले बढ़ते।।

– श्री केशरीचन्द सेठिया, मद्रास